₹ १००/- वार्षिक

दिव्य जीवन

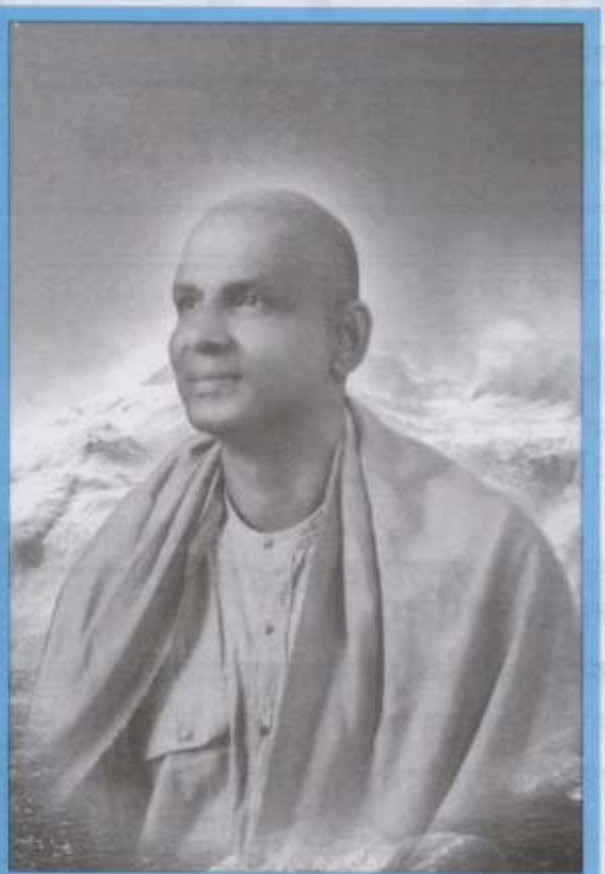

धैर्य, अध्यवसाय, लगन, रुचि, श्रद्धा, उत्साह, उमंग और दृढ़ निश्चय, साधना-काल में आवश्यक हैं। श्रद्धा और भक्ति—ये उदात्त वृत्तियाँ हैं, जो मनुष्य को बन्धन-मुक्त होने में सहायता देती हैं। इन सद्गुणों की वृद्धि करनी होती है। तभी सफलता प्राप्त हो सकती है। मार्ग में जो अनेक कठिनाइयाँ उत्पन्न हो जाती हैं, उन्हें देखें। आध्यात्मिक पथ दुर्गम है। गीता के अनुसार सहस्रों मनुष्यों में से कोई एक ही इस पथ पर चलता है। उनमें भी बहुत कम सफल होते हैं। कोई-कोई आधे मार्ग में ही साधना छोड़ देते हैं, क्योंकि उनके लिए लक्ष्य तक आगे चलना कठिन हो जाता है। धृति, धैर्य और उत्साह सहित धीर साधक ही सच्चिदानन्द-रूप लक्ष्य तक पहुँचते हैं। ऐसी दुर्लभ उच्च आत्माएँ धन्य हैं!

स्वामी शिवानन्द

मार्च २०२२

विश्व-प्रार्थना

हे स्नेह और करुणा के आराध्य देव!
तुम्हें नमस्कार है, नमस्कार है।
तुम सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान् और सर्वज्ञ हो।
तुम सच्चिदानन्दघन हो।
तुम सबके अन्तर्वासी हो।

हमें उदारता, समदर्शिता और मन का समत्व प्रदान करो।
श्रद्धा, भक्ति और प्रज्ञा से कृतार्थ करो।
हमें आध्यात्मिक अन्तःशक्ति का वर दो,
जिससे हम वासनाओं का दमन कर मनोजय को प्राप्त हों।
हम अहंकार, काम, लोभ, घृणा, क्रोध और द्वेष से रहित हों।
हमारा हृदय दिव्य गुणों से परिपूरित करो।

हम सब नाम-रूपों में तुम्हारा दर्शन करें।
तुम्हारी अर्चना के ही रूप में इन नाम-रूपों की सेवा करें।
सदा तुम्हारा ही स्मरण करें।
सदा तुम्हारी ही महिमा का गान करें।
तुम्हारा ही कलिकल्मषहारी नाम हमारे अधर-पुट पर हो।
सदा हम तुममें ही निवास करें।

स्वामी शिवानन्द

क्रोध को प्रेम से जीतिए

क्रोध शारीरिक स्नायु-प्रणाली को नष्ट कर आन्तरिक सूक्ष्म शरीर पर स्थायी छाप डाल देता है। क्रोध के कारण सूक्ष्म शरीर से विषाक्त तीर निकलेंगे। भयंकर क्रोधावेश सूक्ष्म शरीर में गहरा घाव पैदा करेगा। क्या अब आपको क्रोध के भयंकर परिणामों का ज्ञान हो गया?

क्रोध का शिकार न बनिए। उसको क्षमा, प्रेम, करुणा, सहानुभूति, विचार तथा दूसरों के प्रति दया के द्वारा नष्ट कीजिए।

अपने मन को ईश्वर के चरण-कमलों में लगाइए। अपने हाथों को काम करने दीजिए। अभ्यास के द्वारा आप एक ही समय में दोनों कामों को कर सकते हैं। शारीरिक काम यन्त्रवत् स्वतः ही होने लगेंगे। आपका मन भगवान् के पाद-पद्मों में सदा निवास करेगा। संसार में रहते हुए भी आप ईश्वर का साक्षात्कार कर सकेंगे।

स्वामी शिवानन्द

दिव्य जीवन

Vol. XXXII	मार्च २०२२	No. 12

प्रश्नोपनिषद्

द्वितीयः प्रश्नः

तान्वरिष्ठः प्राण उवाच मा मोहमापद्यथाहमेवैतत्पञ्चधात्मानं

प्रविभज्यैतद्बाणमवष्टभ्य विधारयामीति तेऽश्रद्दधाना बभूवुः ।।३ ।।

उनसे (देवों से) वरिष्ठ प्राण ने कहा, 'आप सब मोह को प्राप्त न हों, मैं ही स्वयं को पाँच प्रकार से विभक्त करके इस शरीर को आश्रय देकर इसे धारण करता हूँ।' परन्तु उन्होंने (अन्य देवों ने) उसके कथन पर विश्वास नहीं किया ।

शिवानन्दाश्रममहिमा

(पञ्चचामरसप्तकम्)

ज्ञानभास्कर महामहोपाध्याय श्री एस. गोपाल शास्त्री

सुतुङ्गभङ्गजह्नु जातटान्तवीचिनादिते
सुशीतनीरबिन्दुवाहिमन्दमारुतांचिते।
मनःप्रशान्तिदे सुशर्मसत्कुटीरनामके
वसन् गुरूत्तमो जयत्यतुल्यभे निजाश्रमे ।।१।।

श्री गुरुदेव अपने उस पावन धाम 'आनन्द कुटीर' में अत्यन्त शोभायमान होते हैं, जो अतुलनीय प्रभापूर्ण है, जो भगवती गङ्गा की तरङ्गों के नाद से सदैव अनुगूंजित होता रहता है, जो शीतजलकणों से युक्त मन्द वायु से अभिषिक्त होता है, तथा जो मन को प्रशान्ति प्रदान करता है।

जनान् कुमार्गगामिनो नयन् सुधर्म्यवर्त्मना
हितोपदेशमाधुरीवशीकृताखिलान्तरः ।
सुनिश्चिताशयप्रदर्शनान्निरस्तसंशयः
प्रशास्ति लोकमद्वितीयवैभवेन सद्गुरुः ।।२।।

श्री गुरुदेव अपने अमृतोपदेशों के माधुर्य से जन-जन के हृदय को आकर्षित करते हुए, अपने सुदृढ़ विचारों से उनके समस्त संशयों को दूर करते हुए, कुमार्गगामियों को धर्म के मार्ग पर ले जाते हुए, अपने अद्वितीय प्रज्ञावैभव द्वारा सम्पूर्ण विश्व का मार्गदर्शन करते हैं।

(क्रमशः)

(अनुवादिका : स्वामी गुरुवत्सलानन्द माता जी)

होली

सद्गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज

(होली का पर्व, वसन्त-ऋतु के आगमन तथा जन-जन के हृदय में इस ऋतु के उल्लास का प्रतीक है। समस्त हिन्दू पर्वों-त्योहारों के समान, होली के साथ भी विभिन्न कथाएँ एवं उपाख्यान जुड़े हैं, जो समाज के सभी स्तरों—आध्यात्मिक, पौराणिक, नैतिक आदि के लिए महत्त्वपूर्ण हैं। इस वर्ष होली का पर्व १९ मार्च को है। हम सभी पाठकों को होली की हार्दिक शुभकामनाएँ देते हैं तथा उनके उत्थान-कल्याण हेतु 'होली' विषय पर श्री गुरुदेव के प्रवचनों एवं पुस्तकों से कुछ चयनित अंश प्रकाशित कर रहे हैं।)

समस्त हिन्दू पर्वों में सामाजिक एवं धार्मिक तत्त्व निहित होते हैं। होली का पर्व इसका अपवाद नहीं है। प्रत्येक ऋतु का अपना एक पर्व होता है। भारत में 'होली' वसन्त-ऋतु में मनाया जाने वाला पर्व है। भारत एक कृषिप्रधान देश है, इसलिए हमारे दो मुख्य पर्व कृषि की फसल प्राप्त होने के समय मनाये जाते हैं; इस समय किसानों के अन्नभण्डार एवं धान्यागार भर जाते हैं और वे अपने कठिन परिश्रम के फल को प्राप्त कर उत्सव मनाना चाहते हैं। सम्पूर्ण विश्व में फसल-प्राप्ति का समय उत्सव मनाने का समय होता है।

होली के पर्व में निहित धार्मिक पक्ष भगवान् श्रीकृष्ण की पूजा-आराधना है। इसे कुछ स्थानों पर 'डोल-यात्रा' भी कहा जाता है। 'डोल' शब्द का अर्थ झूला होता है।

होली के पर्व में निहित सामाजिक तत्त्व है—छोटे-बड़े, अमीर-गरीब का भेद भुला कर सबको गले लगाना; सबके प्रति प्रेम एवं सद्भावना रखना। यह पर्व हमें सिखाता है कि हम भूतकाल को, बीती बातों को भूल जायें। पिछले वर्ष के द्वेष एवं दुर्भावनाओं को भूलकर सबके प्रति प्रेम, सहानुभूति एवं सहयोग की भावना के साथ नये वर्ष का प्रारम्भ करें।

होली पर्व से जुड़ी 'होलिका-कथा' बालक प्रह्लाद की भगवान् नारायण के प्रति अनन्य भक्ति तथा होलिका से उसकी रक्षा का वर्णन करती है। हिरण्यकशिपु ने भक्त प्रह्लाद को भगवान् नारायण की भक्ति से विमुख करने हेतु अनेक उपाय अपनाये; परन्तु वह अपने सभी प्रयत्नों में असफल हुआ। अन्त में उसने अपनी बहिन होलिका को, भक्त प्रह्लाद को अपनी गोद में लेकर अग्नि में प्रवेश होने का आदेश दिया; क्योंकि होलिका को यह वरदान प्राप्त था कि अग्नि उसे जला नहीं पायेगी। होलिका ने हिरण्यकशिपु के आदेश का पालन करते हुए अग्नि में प्रवेश किया; परन्तु वह स्वयं तो भस्मीभूत हो गयी और बालक प्रह्लाद मुस्कराते हुए खड़े रहे। भगवान् नारायण की कृपा से, अग्नि उन्हें हानि नहीं पहुँचा सकी। इस कथा के प्रतीकस्वरूप ही प्रतिवर्ष होलिका-दहन किया जाता है जिससे कि सभी

'विजडम लाइट' १९६६ से उद्धृत आलेख का अनुवाद

लोग यह स्मरण कर सकें कि जो भगवान् से प्रेम करते हैं, भगवान् उनकी रक्षा करेंगे, तथा जो भगवद्-भक्तों पर अत्याचार करते हैं, वे भस्मीभूत हो जायेंगे।

होली का अर्थ होता है—होम अथवा यज्ञ। भक्ति एवं ज्ञान की अग्नि द्वारा मन की समस्त मलिनताओं यथा अहंकार, काम, क्रोध आदि को जला दीजिए। ब्रह्म-ज्ञान की अग्नि द्वारा अज्ञान को भस्म कर दीजिए जो आपके सभी दु:खों एवं कष्टों का मूल कारण है। योग-साधना की अग्नि द्वारा वैश्विक प्रेम, करुणा, उदारता, नि:स्वार्थता, सत्यनिष्ठा एवं पवित्रता आदि सद्गुणों को जाग्रत करिए। यही वास्तविक होली है। मूर्खता एवं अज्ञानता के दलदल से बाहर निकलिए और दिव्यता के सागर में निमज्जित होइए।

होली का पर्व, आपसे अपने हृदय में प्रेम की ज्योति को सदैव जाग्रत रखने का आह्वान करता है। आध्यात्मिक प्रबोधन प्राप्त करना वास्तविक होली है। वसन्त-ऋतु भगवान् का स्वरूप है तथा होली का पर्व उनका हृदय है।

हे मानव! अनादि अविद्या को भस्म करिए; काम-वासना को समाप्त करिए तथा अपने दिव्य प्रकाश से ज्योतित होइए। यही वास्तविक होली है। समस्त रंगों एवं रूपों के परे जाइए तथा रंग एवं रूप रहित 'आत्म-तत्त्व' को प्राप्त करिए। यही वास्तविक होली है। संसार के विविध रंगों से आकर्षित होकर उनके पीछे मत भागिए; ये शीघ्र ही फीके पड़ जायेंगे। 'होली' के निहितार्थ को समझिए, रंग-रहित आत्मा में विश्राम करिए; नित्य-आनन्दमय आत्मा में आनन्दित रहिए तथा इस प्रकार वास्तविक होली, पावनतम होली मनाइए।

(अनुवादिका : स्वामी गुरुवत्सलानन्द माता जी)

विश्व-भर के सभी नाम और रूप के पीछे वह ब्रह्म छिपा हुआ है। विभिन्न आकृतियों के अन्त:स्थ सत्य को जानना चाहिए। तुच्छ जीवों का तिरस्कार नहीं करना चाहिए। जो जीवन हमारे अन्दर स्पन्दित हो रहा है, वही जीवन चींटी, कुत्ता, हाथी और समस्त प्राणियों में भी स्पन्दित हो रहा है। उन प्राणियों के साथ एकरूपता अनुभव करनी चाहिए और उनके साथ मिलना-जुलना चाहिए। यह अभिव्यक्ति की एक क्रमिक श्रेणी मात्र है। सभी रूप उसी सगुण ब्रह्म के रूप हैं। पेड़ देखें, पौधा देखें, कुत्ता या बिल्ली कुछ भी देखें, जो रूप दिखता है, वह केवल परदा है और उसके पीछे वह आत्मा या चैतन्य छिपा हुआ है। कुछ समय तक इसका अभ्यास करते रहें, तो अवर्णनीय आनन्द का अनुभव होगा। सारी घृणा समाप्त हो जायेगी। विश्व-प्रेम विकसित होगा। चेतना के एकत्व का अनुभव होगा। यह अनुभव बड़ा भव्य और दुर्लभ होगा। इसका सुनिश्चित परिणाम वेदान्तीय एकता के अनुभव में होगा।

पेड़, पौधा, चींटी, पक्षी, प्राणी और मनुष्य—सबमें आत्मा समान है। सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, कुरसी, दीवाल, पत्थर, प्राणी, पक्षी और मनुष्य—सबमें सामान्य गुण क्या है? अस्तित्व। मेज का अस्तित्व है, वृक्ष का अस्तित्व है। यह अस्तित्व सच्चिदानन्द ब्रह्म का सत्-स्वरूप है।

स्वामी शिवानन्द

आपकी वास्तविक समस्या

परम पावन श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज

उज्ज्वल अमर आत्मन्! इस पावन समाधि मन्दिर में श्री गुरुदेव की दिव्य सन्निधि में एकत्रित, परमपिता परमात्मा की प्रिय एवं सौभाग्यशाली सन्तान! नित्य-परिवर्तनशील नाम-रूपों के पीछे विद्यमान परम शाश्वत सत्ता के दिव्य अनुग्रह से आप सब उन उच्च एवं दिव्य आदर्शों में दृढ़तापूर्वक संस्थित हों जिनका आपने अपने जीवन हेतु चयन किया है; आप सब उन आध्यात्मिक सद्गुणों में भी संस्थित हों जो आध्यात्मिक जीवन में सफलता के लिए अत्यावश्यक हैं। भगवान् की असीम कृपा आप सबको आन्तरिक आध्यात्मिक शक्ति का विकास करने की सामर्थ्य प्रदान करे जिससे आप दिव्य गुणों का, दैवी सम्पदा का अर्जन कर सकें। ये दिव्य सद्गुण हैं—शम, दम, तितिक्षा, उपरति, श्रद्धा, समाधान, विवेक, वैराग्य, मुमुक्षुत्व तथा सत्य, अहिंसा एवं ब्रह्मचर्य।

श्री गुरुदेव की कृपा आप सबको न केवल इन दिव्य सद्गुणों में दृढ़तापूर्वक संस्थित होने में समर्थ बनाये अपितु इन गुणों को अपने दिन-प्रतिदिन के जीवन में, अपने विचारों, भावों, शब्दों एवं कार्यों में अभिव्यक्त करने में भी सक्षम बनाये। श्री गुरुदेव का अनुग्रह आपको विवेक एवं अन्त:दृष्टि प्रदान करे जिससे आप अपने व्यावहारिक जीवन में अन्य जनों से कार्य-व्यवहार करते हुए इन उच्चादर्शों एवं सद्गुणों के प्रति निष्ठावान रह सकें तथा इनका समुचित अभ्यास कर सकें।

आदर्शवाद एक बात है; तथा अपने दिन-प्रतिदिन के जीवन में, अपने आचरण एवं व्यवहार में इसका क्रियान्वयन करना दूसरी बात है। तब यह व्यावहारिक आदर्शवाद बन जाता है; दिव्यता एवं दैवी सम्पद् का क्रियान्वित रूप बन जाता है। यह व्यावहारिक आदर्शवाद अपनाना अत्यधिक कठिन होता है क्योंकि इसमें अनेक बाधाओं एवं विपरीत तत्त्वों का सामना करना पड़ता है। आपका मन निम्न-आदर्शों को छोड़ कर उच्च-आदर्शों को अपनाना नहीं चाहता है; अत: आपका मन ही विकट बाधा बन जाता है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि मन की अपनी कुछ रुचियाँ, आदतें एवं आसक्तियाँ होती हैं; यह स्वयं को कुछ निम्न रूपों में अभिव्यक्त करने का अभ्यस्त हो चुका है तथा यह इन्हें छोड़ना नहीं चाहता है।

मन स्वयं को परिवर्तित नहीं करना चाहता है; इसमें एक प्रकार की हठधर्मिता और ढीठता होती है, यह अपनी पुरानी आदतों एवं आसक्तियों को छोड़ना नहीं चाहता है । इसलिए मन को सुधारने और एक नये मन का निर्माण करने के लिए, अत्यधिक बुद्धिमत्ता, गम्भीरता एवं सच्चे प्रयास की आवश्यकता होती है। यह एक प्रकार का नया जन्म ही होता है। श्री गुरुदेव अपने एक गीत में एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कथन कहते हैं,''जीवन जीने के लिए मृत्यु को स्वीकार करें।'' आपके भीतर भी पुराने मन की मृत्यु होनी चाहिए तथा नवीन मन का जन्म होना चाहिए। क्षुद्र 'मैं' का नाश होने पर ही, व्यक्ति शाश्वत जीवन प्राप्त करता है।

यह एक अत्यन्त कठिन कार्य है। आप मन का दमन कर सकते हैं, इसे नियन्त्रण में रख सकते हैं। परन्तु

'स्पेशल इन्साइट्स इन्टू साधना' से उद्धृत आलेख का अनुवाद

इसका समूल नाश करना, इसका अपनी पुरानी प्रवृत्तियों एवं आदतों को छोड़कर पूर्णत: नया बन जाने के लिए तैयार होना, अत्यन्त कठिन कार्य है। क्योंकि मन सदैव मूल अविद्या अर्थात् माया द्वारा प्रेरित एवं संचालित किया जाता है। अपने पुरुषार्थ द्वारा आपको यह प्रतीत होता है कि आपने मन का नाश कर दिया है, परन्तु यह अब भी जीवित है क्योंकि यह भीतर से इस महान् शक्ति 'माया' द्वारा सतत क्रियाशील बना रहता है।

श्री गुरुदेव अपने 'एटीन इटीज' गीत में कहते हैं, ''ब्रह्म ही एकमात्र वास्तविक सत्ता है।'' और तुरन्त आगे कहते हैं, ''श्रीमान् अमुक एवं अमुक एक मिथ्या सत्ता है।'' जब तक व्यक्ति इस भ्रान्तिपूर्ण विचार का त्याग नहीं कर देता है कि ''मैं महत्त्वपूर्ण हूँ, मैं कुछ हूँ'', जब तक वह इस बात के प्रति विश्वस्त नहीं हो जाता है कि उसका यह अपने अलग व्यक्तित्व का भाव, विशिष्ट अहंता का भाव, उसका यह 'मैं' पन एक मिथ्या सत्ता है, तब तक दिव्य जीवन जीना प्रारम्भ करना अत्यधिक कठिन है।

हम अभी अपने भीतर उस 'मैं' से चिपके हैं, जो दिव्य नहीं है, जो भ्रान्ति, अविद्या एवं अज्ञान का परिणाम है। देहात्म बुद्धि (देह को आत्मा मानना) के कारण ही मनुष्य स्वयं को एक विशिष्ट एवं अलग व्यक्तित्व समझता है और इससे उसकी झूठी अहंता, झूठे 'मैं' का जन्म होता है। आपके वास्तविक स्वरूप 'शुद्ध चैतन्य तत्त्व' की जड़ तत्त्व के साथ समीपता, इस मिथ्या 'मैं' का निर्माण करती है।

आज यही 'मैं' सम्पूर्ण विश्व में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण वस्तु है। यद्यपि इसका अस्तित्व नहीं है, यह आपके प्रपंच, आपके बन्धन, तथा आपके समस्त दु:खों-कष्टों का कारण है; परन्तु माया अपनी असीम शक्ति से आपको भ्रमित कर देती है और आप अपने इस मिथ्या 'अहं' को, मिथ्या 'मैं' को, सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण मानकर इसे सावधानीपूर्वक सुरक्षित रखना चाहते हैं, इसका पोषण करना चाहते हैं। प्रात:काल से सायंकाल तक हम अपने 'अहं', अपनी 'मैं' की देखभाल में लगे हैं कि कहीं कोई इसे चोट न पहुँचा दे। हमें यह समझना चाहिए कि यही हमारी सबसे बड़ी समस्या है, परन्तु हम इसे बनाये रखने के लिए हर सम्भव प्रयास करते रहते हैं। यह 'अहं' भाव ही आपके आध्यात्मिक जीवन की वास्तविक एवं मुख्य समस्या है।

यदि आप 'अहं' भाव का मनोवैज्ञानिक रूप से विश्लेषण करेंगे तो भी आप यही पायेंगे कि यही समस्त कठिनाइयों, कलह, संघर्ष, झगड़ों, द्वेष एवं दुर्भावना का कारण है। परन्तु कोई भी व्यक्ति अपने आन्तरिक व्यक्तित्व का इस प्रकार गहरा विश्लेषण नहीं करना चाहता है। क्योंकि यह 'अहं', यह 'मैं' उसके व्यक्तित्व का आधार है, उसके जीवन का मुख्य अवलम्ब है। यदि इसे हटा दिया जाये, तो उसका सम्पूर्ण व्यक्तित्व ही ढह जायेगा। इसलिए इसे बनाये रखा जाता है। इसे सर्वाधिक महत्ता दी जाती है। यद्यपि यह हमारे कष्ट एवं पीड़ा का कारण है। अहंकृति (अहंकार) हमारे लिए बाधास्वरूप है; यही हमारे भवरोग का कारण है। इसके कारण ही हम इतना दु:ख प्राप्त कर रहे हैं। परन्तु हम नहीं जानते हैं कि यही हमारे दु:खों-कष्टों का कारण है। हम सोचते हैं कि हमारा 'अहं', सब दु:खों से हमारी रक्षा करेगा। हम अपने व्यक्तित्व को बनाये रखने के लिए इस पर निर्भर रहते हैं।

प्रत्येक व्यक्ति इस महान् उक्ति से परिचित है, ''"मैं' तब ही मुक्त होऊँगा, जब 'मैं' नहीं रहूँगा (Then shall I be Free, when I shall cease to be)", परन्तु हम इस कथन की महत्ता को नहीं समझते हैं। हम

अपने जीवन में, अपनी साधना में इसके महत्त्वपूर्ण स्थान को नहीं पहचानते हैं। इसलिए हम सब कुछ जानते हुए भी अज्ञानता में जीते हैं। हमारे पास सम्पूर्ण ज्ञान है, परन्तु हम अज्ञान से चिपके रहते हैं। इसलिए हम रोते हैं, विलाप करते हैं, लड़ते-झगड़ते हैं। इस समस्या का समाधान अत्यन्त सरल है; हम यह नहीं जानते हैं और इसी कारण हम स्वयं अपने लिए अनेकों दु:खों-कष्टों, पीड़ा एवं निराशा को आमन्त्रित करते हैं। यदि हम अपनी इस मिथ्या अहंता, 'मैं' पन को महत्ता देना बन्द कर दें और अपने वास्तविक स्वरूप में स्थित हो जायें तो हम सब दु:खों से मुक्त हो सकते हैं।

यद्यपि इस सत्य को सैकड़ों-हजारों बार कहा गया है, परन्तु हम इसके महत्त्व को समझ नहीं पाते हैं। इसलिए भगवान् श्री कृष्ण श्रीमद्भगवद्गीता में कहते हैं, ''**दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया**—मेरी इस त्रिगुणात्मिका दिव्य 'माया' के परे जाना अत्यन्त कठिन है।'' यह माया इतनी सूक्ष्म एवं भ्रान्तिकारक है कि व्यक्ति सत्य को जानते हुए भी नहीं जानता है; वह अज्ञानता में जीता है। सब कुछ देखते हुए भी वह समझ नहीं पाता है, अन्धा ही बना रहता है। सत्य के विषय में सुनकर भी वह उसे ग्रहण नहीं कर पाता है। माया के प्रभाव से सुनी हुई बात पर ध्यान नहीं देता है। इसलिए सुनते समय भी वह समझ नहीं पाता है कि क्या कहा जा रहा है।

यह माया की ही सूक्ष्म कार्य-विधि है जो मनुष्य के इस मिथ्या व्यक्तित्व को, इस मिथ्या 'मैं' को बनाये रखना चाहती है। इस मिथ्या व्यक्तित्व को नष्ट किया जाना चाहिए; परन्तु आज समाज में अधिकांश व्यक्ति इसकी सुरक्षा को ही अपने जीवन का महत्त्वपूर्ण कार्य मानते हैं। वे अत्यल्प व्यक्ति वास्तव में सौभाग्यशाली हैं जिन्होंने यह अच्छी तरह समझ लिया है कि हमारे प्रपंच, हमारे बन्धन का कारण हमारे भीतर ही है, बाहर नहीं। हम स्वयं ही अपनी मुख्य समस्या हैं, बाहर अन्य कोई हमारे लिए समस्या नहीं है। यदि आप अपने मिथ्या व्यक्तित्व, मिथ्या 'मैं' के परे जाकर अपने वास्तविक दिव्य स्वरूप को प्राप्त करना चाहते हैं, तो इस तथ्य पर गहन चिन्तन-मनन किया जाना चाहिए, इसे समझना चाहिए तथा एक-न-एक दिन इसका समाधान खोजा जाना चाहिए । एक दिन यह कार्य किया ही जाना है। जब तक यह नहीं होता है, तब तक हम स्वयं ही अपनी समस्याओं की रक्षा एवं पोषण करते रहेंगे; हम स्वयं ही अपने बन्धन एवं कष्टों को सतत बनाये रखेंगे।

इस बात पर गहराई से विचार करिए। सतही चिन्तन से आप वास्तविकता को नहीं समझ पायेंगे। केवल गहन चिन्तन ही आपको अपनी वर्तमान परिस्थिति की सत्यता से परिचित करायेगा कि आप अभी एक सीमित मानवीय व्यक्तित्व से, श्रीमान् अमुक एवं अमुक ("so and so") होने की चेतना से बँधे हैं। आपकी वर्तमान चेतना का वास्तविक स्वरूप जानने के लिए सतत एवं गम्भीर चिन्तन-मनन अत्यावश्यक है।

इसलिए हम परमपिता परमात्मा एवं श्री गुरुदेव के अनुग्रह की याचना करते हैं कि उनकी दिव्य कृपा एवं आशीर्वाद हमें अपनी आन्तरिक चेतना की वास्तविक स्थिति के प्रति जागरूक होने की सामर्थ्य प्रदान करें; अपने क्षुद्र मानवीय व्यक्तित्व से ऊपर उठकर अपने वास्तविक दिव्य स्वरूप में संस्थित होने की सामर्थ्य प्रदान करें।

केवल तभी दिव्य जीवन प्रारम्भ होता है। केवल तभी दिव्य जीवन सम्भव है। अन्यथा माया के प्रभाव से हम यह सोचने लगते हैं कि हमने अपनी चेतना को उच्चतर स्तर तक उठा लिया है जबकि हम अपने मिथ्या 'अहं' की चेतना में ही स्थित होते हैं। केवल गहन विवेक, विचार एवं विश्लेषण द्वारा माया की सूक्ष्म क्रियाओं को समझा जा

सकता है; अन्यथा इन्हें समझना अत्यन्त कठिन है। इसलिए सन्त-महापुरुष कहते हैं कि प्रबल विवेक आपका सतत साथी होना चाहिए। भगवद्भक्ति के साथ तीक्ष्ण एवं विश्लेषणात्मक बुद्धि की भी आवश्यकता है। हममें भक्ति, ज्ञान एवं वैराग्य—तीनों साथ-साथ रहने चाहिए।

आज हम भारत की उन महानतम आध्यात्मिक विभूति की जन्म-जयन्ती मना रहे हैं जो भक्ति, ज्ञान एवं वैराग्य से परिपूर्णरूपेण सम्पन्न थी। इसलिए उनका नाम अमर हो गया है। श्री कृष्ण चैतन्य-गौराङ्ग महाप्रभु भक्ति की उच्चतम अवस्था में प्रतिष्ठित एक परम भक्त थे। परन्तु साथ-ही-साथ, वे अत्यन्त तर्कशील एवं विश्लेषणात्मक बुद्धि से भी सम्पन्न थे। इन दोनों के समन्वय से ही, वे परम वैराग्य में भी प्रतिष्ठित हुए। यदि आप उनके जीवन-चरित का अध्ययन करेंगे, तो आप उनके व्यक्तित्व में परम भक्ति, परम ज्ञान एवं परम वैराग्य की इस दुर्लभ एवं अद्भुत त्रिवेणी का दर्शन कर आश्चर्यचकित हो जायेंगे।

उनका जन्म आज से लगभग ५०० वर्ष पूर्व हुआ; वे ही गौड़ीय वैष्णव सम्प्रदाय तथा हरे कृष्णा मूवमेण्ट के प्रवर्तक हैं। उन्होंने अपनी क्षुद्र 'मैं', अपने अहंभाव की मिथ्यता का पूर्णरूपेण अनुभव किया और एक ही क्षण में अपनी सारी महत्त्वाकांक्षाओं और बौद्धिक ज्ञान के प्रति अपने प्रेम को तिलांजलि दे दी। वे एक महान् विद्वान एवं अत्यन्त प्रखर बुद्धि के स्वामी थे। परन्तु आध्यात्मिक जाग्रति एवं अन्त:दृष्टि के कारण, वे अपनी महत्त्वाकांक्षा, विद्वत्ता एवं अहंकार पर विजय पाने में समर्थ हुए जो कि वस्तुत: कठिन कार्य है। यदि आपने अपने अहंकार पर विजय प्राप्त कर ली है, तो आपने संसार पर, प्रपंच पर विजय प्राप्त कर ली है, आपने बन्धन पर विजय प्राप्त कर स्वयं को मुक्त कर लिया है।

''मैं' तब मुक्त होऊँगा, जब 'मैं' नहीं रहूँगा''। परन्तु यह 'मैं' प्रत्येक को अत्यन्त प्रिय है, प्रत्येक के लिए विश्व की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण वस्तु है, इसे कोई छोड़ना नहीं चाहता है; यह 'मैं' ही आपकी वास्तविक समस्या है तथा यह अन्य जनों के लिए भी समस्याएँ उत्पन्न करती है।

इस समस्या के समाधान के लिए ही समस्त दर्शनों (philosophies) का प्रादुर्भाव हुआ है। सभी महान् आचार्यों यथा शंकराचार्य, रामानुजाचार्य, मध्वाचार्य, वल्लभाचार्य, निम्बार्काचार्य; सभी महान् गुरुओं यथा गुरु नानक देव, जरथुस्त्र, जीसस क्राइस्ट, महात्मा बुद्ध आदि का प्रयास यही रहा है कि हम इस क्षुद्र 'मैं' पर विजय प्राप्त करने में समर्थ बनें। इस मिथ्या 'मैं' को समझना बहुत कठिन है। दर्शन शास्त्र की समस्त विचारधाराएँ एवं परम्पराएँ हमें इस 'मैं' की वास्तविकता दिखाने के लिए अस्तित्व में हैं ताकि हम जान सकें कि यह 'मैं' ही हमारी वास्तविक समस्या है। यह कार्य सरल नहीं है। इस सूक्ष्म से सूक्ष्मतम सत्य को समझने के लिए आपको सच्चा योगी बनना होगा, सच्चा विवेकी एवं सच्चा वैरागी बनना होगा।

भगवान् के दिव्य अनुग्रह आप सब पर हों। भगवद्-अनुग्रह आवश्यक है। गुरुकृपा आवश्यक है तथा आपमें इस सत्य को स्वीकार करने की इच्छा एवं तत्परता आवश्यक है। इस सत्य को जानने के बाद, इसे स्वीकार करने की इच्छा आवश्यक है। यह तीसरी महत्त्वपूर्ण आवश्यकता है। आप सबको ये तीनों प्राप्त हों; आपको भगवद्-कृपा, गुरुकृपा एवं स्वकृपा प्राप्त हो।

हरि ॐ तत् सत्।

(अनुवादिका : स्वामी गुरुवत्सलानन्द माता जी)

दिव्य आत्मन्!

ॐ नमो नारायणाय।

ॐ नमो भगवते शिवानन्दाय।

सस्नेह प्रणाम।

आप सब जानते हैं कि २५ अप्रैल २०२२, परम प्रिय एवं परम पूज्य श्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज की जन्म-शताब्दी का पावन दिवस है। मुख्यालय आश्रम ने स्वामी जी महाराज की जन्म-शताब्दी के उपलक्ष्य में एकवर्षीय कार्यक्रम आयोजित करने का निश्चय किया था, परन्तु कोविड-१९ महामारी के संक्रमण के कारण यह सम्भव नहीं हो पाया।

दुर्भाग्यवशात्, कोविड-१९ महामारी का संक्रमण वर्ष २०२२ के प्रारम्भ तक बना रहा, इसलिए हम 'शतदिवसीय जन्म-शताब्दी कार्यक्रम' को भी १४ जनवरी २०२२ से प्रारम्भ नहीं कर सके। परन्तु, आश्रम द्वारा जन्म-शताब्दी कार्यक्रम के एक भाग के रूप में, परम पूज्य श्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज की पुस्तकें एवं पुस्तिकाएँ नियमित अन्तराल पर प्रकाशित की जाती रही हैं।

परमपिता परमात्मा के दिव्य अनुग्रह एवं श्री गुरुदेव के आशीर्वाद से अब कोविड-१९ महामारी की तीसरी लहर का प्रकोप शान्त हो गया है। अतः, हम १८ मार्च से २५ अप्रैल २०२२ तक विविध सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक कार्यक्रमों के आयोजन द्वारा पूज्य श्री स्वामी जी महाराज की जन्म-शताब्दी को भव्य रूप में मनाना चाहते हैं। जन्म-शताब्दी महोत्सव के कार्यक्रम का विस्तृत विवरण पत्रिका के आगामी पृष्ठों पर प्रकाशित किया जा रहा है।

द डिवाइन लाइफ सोसायटी की समस्त शाखाओं से हमारा अनुरोध है कि वे कोविड-१९ सम्बन्धी दिशानिर्देशों का पालन करते हुए, पूज्य श्री स्वामी जी महाराज की पावन स्मृति में विविध आध्यात्मिक एवं सेवा कार्यक्रम आयोजित करें। इस सम्बन्ध में, मैं आप सबको उन पाँच मूलभूत उद्देश्यों के विषय में बताना चाहता हूँ जो वर्ष १९८६ में सद्गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज की जन्म-शताब्दी मनाने हेतु डी एल एस शाखाओं को बताये गये थे। ये पाँच आधारभूत उद्देश्य, श्री गुरुदेव के मुख्य सिद्धान्तों 'सेवा, प्रेम एवं दान' का सारतत्त्व ही हैं। ये हैं—

१. भूखों को भोजन दें।

२. वस्त्रहीनों को वस्त्र दें।

३. रोगियों की सेवा करें।

४. पथभ्रष्ट हुए लोगों के उत्थान हेतु कार्य करें।

५. आध्यात्मिक ज्ञान का प्रसार-प्रचार करें तथा मनुष्य में अन्तर्निहित दिव्यता को प्रकट करें।

इनमें से किसी एक अथवा एक से अधिक उद्देश्य के अनुरूप कार्यक्रम आयोजित करके डी एल एस शाखाएँ परम पूज्य श्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज की जन्म-शताब्दी को उपयुक्त रूप में मना सकती हैं।

भगवान् विश्वनाथ, सद्गुरुदेव श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज एवं परम पूज्य श्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज के विपुल आशीर्वाद आप सब पर हों।

ॐ एवं प्रेम सहित

स्वामी योगस्वरूपानन्द

परमाध्यक्ष

ब्रह्मविद्या का अधिकारी वह मनुष्य है, जो कर्तव्य-कर्मों द्वारा चित्त-शुद्धि प्राप्त कर चुका हो और कर्म-फल के प्रति अनासक्त हो।

केवल ज्ञान ही मोक्ष का एकमात्र साधन है। ज्ञान महावाक्यों के विचार अर्थात् सही-सही बोध से उत्पन्न होता है। महावाक्य हैं—'**तत्त्वमसि**' आदि। इनसे आत्मा और परमात्मा की एक-रूपता प्रकट होती है।

मृत्यु-रूपी आग ज्ञान-रूपी जल से बुझायी जा सकती है। आत्म-चिन्तन से ज्ञान मिलता है। आत्मज्ञान से मुक्ति प्राप्त होती हो, ऐसी बात नहीं है, क्योंकि आत्मज्ञान ही मुक्ति है।

''ऋषियों ने कहा कि संसार में जितने भी भले काम किये जाते हैं, उनमें ऐसा कोई काम नहीं है जो दूसरों की सहायता के बिना अकेले ही मनुष्य को मोक्ष दिलाने की क्षमता रखता हो। भृगु ऋषि ने उत्तर दिया कि 'मुख्य बात है वास्तविक तत्त्व आत्मा का ज्ञान प्राप्त करना; क्योंकि वह सर्वोत्तम विद्या है, उत्कृष्ट विज्ञान है और वही अमरत्व दिलाने में समर्थ है''' (मनुस्मृति : १२/८५)।

स्वामी शिवानन्द

स्वामी कृष्णानन्द जन्म–शताब्दी महोत्सव

(१८ मार्च २०२२ से २५ अप्रैल २०२२ तक)

२५ अप्रैल २०२२ परम पूज्य श्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज की जन्म–शताब्दी का शुभ एवं आनन्दमय अवसर है। मुख्यालय आश्रम में श्री गौरांग महाप्रभु जयन्ती के पावन दिवस अर्थात् १८ मार्च २०२२ से पूज्य श्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज के जन्म–शताब्दी महोत्सव का प्रारम्भ होगा।

इस अवधि में आयोजित होने वाले कार्यक्रम हैं : —

२२ मार्च से २८ मार्च २०२२	**बरसाना की साध्वी मुरलिका जी द्वारा श्रीमद्भागवत कथा**
२ अप्रैल से ६ अप्रैल २०२२	**वेद पारायण, पवमान होम एवं विशेष पूजाएँ**
१० अप्रैल २०२२	**श्री रामनवमी पर्व**
१२ अप्रैल से १८ अप्रैल २०२२	**श्री नौचुर वेंकटरमण जी द्वारा श्रीमद्भागवत कथा**
१९ अप्रैल एवं २० अप्रैल २०२२	**मध्य प्रदेश के श्री प्रह्लाद टिपानिया जी द्वारा मालवी लोकशैली में कबीर–भजन**
२१ अप्रैल से २३ अप्रैल २०२२	**आध्यात्मिक सम्मेलन**
२४ अप्रैल २०२२	**श्री कार्तिक रमण जी द्वारा भक्ति–संगीत**
२५ अप्रैल २०२२	**परम पूज्य श्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज के १०० वें जन्मदिवस का भव्य कार्यक्रम**

१८ मार्च से २५ अप्रैल तक आश्रम के संन्यासी एवं ब्रह्मचारी वृन्द तथा विभिन्न डी एल एस शाखाओं के भक्तजनों द्वारा प्रभातफेरी निकाली जाएगी एवं भजन हॉल में अखण्ड महामन्त्र कीर्तन किया जाएगा।

द डिवाइन लाइफ सोसायटी

पूज्य पुष्प

श्री जीतराम भट्ट

प्रभु–प्रेषित होते हैं सुकृती, हेतु अबोधों के पथ–दर्शन।
जीव–जगत् को जाग्रति दे कर, ब्रह्मलीन होते हैं मुनि–जन।।
शिवानन्द गुरु–तरु से विकसित, साधु–शिरोमणि शिष्य–पुष्प।
अध्यात्म–वाटिका में अविचल, है खिला हुआ यह विमल पुष्प।।

सुरभि–शान्ति है सुमन–प्रवाहित, मोह–गन्ध का क्षय है करती।
मधु–शिक्षा पाने की इच्छुक, अलि–भक्तों की भीड़ मचलती।।
व्यथा–हर्ष के समदर्शक तुम, ग्रीष्म–शिशिर के भेद–रहित हो।
अचल–साधना करते पुनरपि, धीरयुक्त तुम विनय–शमित हो।।

धन्य पुष्प! कुछ स्वार्थ नहीं, पर अर्थ हेतु ही जीवन है।
'स्व' समष्टि में परिवर्तित कर, निरत सर्वहित उर पावन है।।
स्वत: बाह्य है दिव्य मूर्ति, मानस भी राजस युक्त नहीं।
विष–विषय–भोग से बहुत दूर, चखते हैं ईशामृत रस ही।।

विपुल विश्व हो शान्ति–संघटित, है प्रण–पावन दिव्य हृदय का।
सत्य–कुञ्ज की शाश्वतता में, संस्थित हैं कर त्याग विषय का।।
निर्लिप्त भाव से प्रकृतिजयी, विद्यार्थी–दल के ज्ञान–स्रोत।
सरल मूर्ति हैं दीन–जनों की, भ्रान्त–पथिक की नवल ज्योति।।

कलह–द्वेष से कलुष जगत् में, मनु–संस्कृति का सूर्य उदित है।
किरण–ज्ञान, उपदेश–ज्योति ही, धर्महीन जग में प्रसरित है।।
ईश–सृष्टि का अरसिक मानव, दीर्घावधि तक ज्ञान–रसित हो।
षष्टि–पूर्ति है अर्चनीय तव, आयुवृद्धि अरु रोग–रहित हो।।

दिव्य जीवन पत्रिका अप्रैल १९८२ ''परम पूज्य श्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज हीरक जयन्ती अंक'' से उद्धृत

परम पूज्य श्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज का जन्म–शताब्दी वर्ष

तिरेसठ नयनार सन्त :

पेरुमिझालै कुरुम्बा नयनार

परम पावन श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज

गुरु भगवान् हैं। वे भगवान् जो हमसे कभी भी अलग नहीं हैं, जो हमारे रक्षक एवं आधार हैं, वे ही गुरु के रूप में हमारे सम्मुख प्रत्यक्ष रूप में प्रकट होते हैं। जो व्यक्ति श्रद्धा और विश्वास के साथ गुरु की आराधना करता है, उसे सम्पूर्ण सिद्धियों तथा शाश्वत आनन्द की प्राप्ति होती है। पेरुमिझालै कुरुम्बा नयनार ऐसी गुरु-भक्ति में सर्वोपरि थे। वे भगवान् शिव के उत्कृष्ट भक्त थे तथा शिव-भक्तों के प्रति भी उनके हृदय में अगाध श्रद्धा एवं भक्ति थी। उन्होंने सुन्दरमूर्ति नयनार की महानता के सम्बन्ध में सुना और मन-ही-मन उनको अपना गुरु मान लिया। उनके लिए अब केवल सुन्दरमूर्ति ही एकमात्र आश्रय बन चुके थे। वे अपने गुरु की काया-वाचा-मनसा आराधना करते थे। गुरु की कृपा से उन्हें समस्त सिद्धियाँ प्राप्त हो गयी थीं। वे हृदयपूर्वक शिव-भक्ति और गुरु-भक्ति में लीन थे।

एक बार सुन्दरर तिरुवान्चैकालम आये, जहाँ से वे भगवान् के धाम में चले गये थे। कुरुम्बा नयनार को अपनी योग-शक्ति से ज्ञात हो गया कि यह घटना होने वाली है। अपने गुरु के चले जाने के बाद वह इस संसार में रहना नहीं चाहते थे, इसलिए उन्होंने सुन्दरर के गमन करने से एक दिन पूर्व ही शिव-योग के माध्यम से अपनी नश्वर देह को त्याग दिया और शिवधाम पहुँच गये।

(अनुवादिका : स्वामी शिवाश्रितानन्द माता जी)

आत्म-भावपूर्वक मानवता की नि:स्वार्थ सेवा ही चित्त-शुद्धि का साधन और परम सत्य के साक्षात्कार का एकमात्र मार्ग है। उस सेवा का माध्यम कुछ भी हो सकता है जैसे—सार्वजनिक और सामाजिक संस्थाओं को दान देना, गरीबों को भोजन और वस्त्रहीनों को वस्त्र देना, अभावग्रस्तों के प्रति संवेदना प्रकट करना, रोगियों की सेवा करना, पतितों को सहारा देना, पीड़ितों की सहायता करना, अज्ञानियों को उनसे कुछ भी प्रतिफल की अपेक्षा न रखते हुए ज्ञान देना, गरीब विद्यार्थियों को बिना किसी प्रत्याशा के पढ़ाना और यह समझना कि जो-कुछ हम कर रहे हैं, वह सब उस भगवान् की ही योजना है और हम उसके हाथ के साधन हैं, निमित्त मात्र हैं। यही निष्काम कर्मयोग है।

एक चिकित्सक गरीब रोगियों का उपचार सही मनोभाव से करे, तो उसका चित्त शीघ्र शुद्ध होगा। उसके लिए अपना चित्त शुद्ध करने का विशाल क्षेत्र खुला हुआ है। चिकित्सक यदि सच्चा कर्मयोगी बने, तो वह बड़ी सरलता से भगवत्साक्षात्कार कर सकता है। जिस किसी की भी वह सेवा करे, तो यही समझे कि मैं साक्षात् भगवान् की सेवा कर रहा हूँ।

स्वामी शिवानन्द

आपका शान्ति-दूत :

ध्यान योग

परम पावन श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज

(पूर्व-अंक से आगे)

ध्यानावस्था में ध्यान

इन सभी प्रविधियों का उपयोग करने से धीरे-धीरे अन्तर्मन की स्थिति ऐसी बन जायेगी जो ध्यानावस्था में प्रवेश करने में सक्षम हो। किसी विशेष कार्य को आप केवल एक उपयुक्त उपकरण के साथ ही सम्पन्न कर सकते हैं। किसी कुण्ठित कैंची के साथ आप नाखून नहीं काट सकते, न ही जंग लगे हुए ब्लेड के साथ दाढ़ी बना सकते हैं। तब फिर ऐसे मन के साथ ध्यान लगाने की आशा किस प्रकार कर सकते हैं जो सदैव व्याकुल रहता हो, विकर्षणों से भरा हुआ हो और अशान्ति का कारण उत्पन्न करने वाली घटना-परिस्थितियों में उलझा रहता हो? व्यक्ति का प्रत्येक पग पर सतर्क रहना, अपनी सहज बुद्धि का उपयोग करना और अतीत के निजी अनुभवों से स्वयं को दूर रखना आवश्यक है। इस संसार में आप पर्याप्त दीर्घ काल से जीवन को जी चुके हैं और आप भलीभाँति जान गये हैं कि कैसी घटनाएँ एवं परिस्थितियाँ आपके मन को व्याकुल कर देती हैं। इसीलिए तो भगवान् आपको ऐसे अनुभव देते हैं। आपसे अब यह अपेक्षा की जाती है कि उनका स्मरण रखें, उन स्मृतियों को उपयोग में लायें और विवेकशील बनें—पुनः उसी जाल में न उलझ जायें जिसके पाश में पहले सैकड़ों बार बँध चुके हैं।

ऐसा करने के उपरान्त तब फिर आप ध्यान की जो भी प्रविधि अपनायेंगे, वह प्रभावशाली होगी। अपने मन का प्रबन्धन कर सकने वाले व्यक्ति तो केवल आप ही हैं। रोगी की चिकित्सा करने के लिए चिकित्सक स्वयं औषधि नहीं ले सकता। वह केवल रोगी को बतला ही सकता है, जैसे मैं अब बतला रहा हूँ; किन्तु औषधि निश्चित रूप से केवल ध्याता को ही लेनी होगी क्योंकि ध्यान करने वाले ध्याता का मन और जीवन तो स्वयं उसका ही है। आपके मन और बाह्य जीवन का भी परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है क्योंकि यह सामान्य तथ्य है कि आपका बाह्य जीवन भी आपके उसी मन से जिया जाता है। आप उसी मन से घटना-परिस्थितियों में संलग्न होते हैं और अन्य लोगों से सम्बन्ध जोड़ते हैं जिससे आपने योग और ध्यान करना है। आपके पास दो भिन्न-भिन्न मन नहीं हैं कि एक से आप संसार में कार्यरत रहें और दूसरे का ध्यान-कक्ष में उपयोग करें। नहीं, ऐसा नहीं है, मन तो एक ही है। पुनश्चः, अतीत के अनुभवों का स्मरण करें और उनका उपयोग वर्तमान परिस्थितियों पर अब वर्तमान में करें जिससे कि मन किसी भी कारण से अशान्त न हो और ध्यान एवं प्रार्थना के लिए अनुपयोगी न बने। यदि आप सदैव सतर्क रहते हैं, अतीत के अनुभवों के प्रकाश में जीते हैं, बुद्धिमत्ता सहित झमेलों से दूर रहते हैं और ऐसी परिस्थितियों को उत्पन्न नहीं होने देते जो आपके मन को विचलित करने वाली हों, तो आपका अन्तर्मन अपनी आध्यात्मिक अवस्था को बनाये रखेगा और प्रार्थना, एकाग्रता और ध्यान को बाधित नहीं होने देगा।

ध्यान में प्रवेश पाने के ये भिन्न-भिन्न तीन मार्ग हैं। एक यह अद्वैत ध्यान है, जिसमें आपकी अपनी पहचान परमात्मा में विलीन हो जाती है। फिर इससे थोड़ा अल्प प्रकार का ध्यान है जिसमें आपकी निजी भिन्न आत्मा होने की भावना बनी रहती है, जैसे सागर की ओर बढ़ती हुई नदी हो। सागर की ओर बढ़ती हुई नदी के समान मानो आप सागर का ध्यान कर रहे हों, किन्तु ध्याता के रूप में आपकी जागरूकता बनी रहती है। तृतीय प्रकार का ध्यान, अपने

इष्टदेव पर ध्यान करना है, जिसमें आप उनके प्रति भक्ति के साथ, दिव्य प्रेम के साथ और आध्यात्मिक भावनाओं के साथ सम्बन्ध जोड़ते हैं। आप भगवान् के उस रूप पर ध्यान करते हैं जो आपको सर्वाधिक प्रिय और आकर्षक लगता हो। भले ही इन सबकी विशेष प्रविधियाँ परस्पर भिन्न हों, किन्तु अधिकांश रूप से सभी प्रकार के ध्यान के मार्ग संक्षेप रूप में इन्हीं में आ जाते हैं, चाहे वह ईसाई, मुस्लिम, यहूदी अथवा अन्य किसी भी धर्म के सन्दर्भ में हो।

मैंने बहुत सी विशिष्ट प्रविधियों का वर्णन नहीं किया है, किन्तु ध्यान के लिए शास्त्रीय दायरे के अन्तर्गत आने वाली प्रमुख विधियों का वर्णन आपके लिए कर दिया है। इस सन्दर्भ में यद्यपि ध्यान का अर्थ सदैव ही परमात्मा पर ध्यान करने के प्रयास से है, तथापि यही प्रविधि अन्य विषयों के लिए भी प्रयोग में लायी जा सकती है। यदि आप अत्यधिक क्रोधी स्वभाव से छुटकारा पाना चाहते हैं तो शान्ति पर ध्यान कर सकते हैं, भगवान् यीशु, बुद्ध, महात्मा गाँधी पर ध्यान कर सकते हैं, अथवा अन्य कोई भी जो क्रोध से रहित हो, उस पर ध्यान कर सकते हैं। आप क्रोध की हानियों पर ध्यान कर सकते हैं और फिर बाद में क्रोधी स्वभाव त्यागने के गुणों पर ध्यान कर सकते हैं तथा फिर उन महान् विभूतियों पर ध्यान कर सकते हैं जो अक्रोध के जीवन्त रूप हैं।

स्वयं अपने इस रूप पर ध्यान करें कि आप पूर्णता की अवस्था में पहुँचे हुए हैं। किसी विशेष प्रकार की नकारात्मक प्रवृत्ति को दूर करने तथा अपने स्वभाव में आध्यात्मिकता को विकसित करने के लिए ध्यान करने का एक मार्ग यह भी है। उदाहरण के लिए भय से मुक्त होने के लिए इसे उपयोग में लाया जा सकता है क्योंकि हम सब सदैव किसी-न-किसी भय से ग्रसित ही रहते हैं। निर्भीकता के गुणों पर और भयाकुल रहने के दोषों पर ध्यान करें। फिर किसी निर्भीक विभूति, जैसे जॉन ऑफ़ आर्क पर अथवा अन्य किसी निर्भीक व्यक्ति पर ध्यान करें और फिर मानो आप वीरता के गुण से पूर्णतया सम्पन्न हो गये हों, इस रूप में स्वयं अपने ऊपर ध्यान करें। इस प्रकार, ध्यान की प्रविधियों को विविध स्तरों पर उपयोग में लाया जा सकता है। यदि आप किसी विषय पर पूर्ण अधिकार प्राप्त करना चाहते हैं तो आप उस विषय पर ध्यान कर सकते हैं।

निश्चय ही सैकड़ों प्रकार के ध्यान होंगे, किन्तु आपके लिए उन सबका कोई अर्थ नहीं है। आपको यह जान लेना अनिवार्य है कि आपके अनुकूल क्या है, फिर उसे अपना लें और तब उस पर दृढ़तापूर्वक स्थिर रहें। ऐसी बहुत सी वस्तुएँ हैं जो आवश्यक नहीं है कि आपके लिए उपयुक्त हों। विभिन्न प्रवृत्तियों के बहुत से लोग हैं, इसलिए ध्यान भी बहुत प्रकार के होने आवश्यक हैं। ध्यान के लिए कुछ प्रविधियाँ सिखायी जाती हैं, क्योंकि ऐसे लोग भी हैं जो आध्यात्मिक प्रबोधन पाना नहीं चाहते किन्तु तनाव से मुक्ति पाना चाहते हैं, अथवा वे अच्छी निद्रा लेना चाहते हैं, अथवा वे अपनी भावनाओं को शान्त करने के इच्छुक हैं। वे आन्तरिक शान्ति चाहते हैं और तनाव से छुटकारा पाना चाहते हैं ताकि उन्हें अनिद्रा के लिए औषधियाँ न लेनी पड़ें। कुछ लोग अपनी स्मरण शक्ति एवं चौकसी को विकसित करने के प्रयास में होते हैं और एकाग्रता की शक्ति को बढ़ाना चाहते हैं। यदि वे वकील हैं, विद्यार्थी हैं या व्यापारी हैं तो ये सब विधियाँ उनको अत्यन्त लाभान्वित करेंगी, इसमें सन्देह नहीं। इन सभी प्रविधियों का अपना स्थान है और ये किसी-न-किसी विशेष आवश्यकता के लिए उपयोगी हैं, लोग जो चाहते हैं वह उनसे उन्हें प्राप्त हो जायेगा। किन्तु एक साधक होने के नाते आपको यह निश्चित रूप से स्वयं निर्णय लेना है कि आप चाहते क्या हैं। आपका परम लक्ष्य क्या है, जिसे आपने प्राप्त करना है और आपके लिए किस प्रकार का ध्यान करना है? तब फिर आप उसे अपनायें और उसी पर दृढ़ रहें।

(समाप्त)

(अनुवादिका : स्वामी शिवाश्रितानन्द माता जी)

आध्यात्मिकता का सत्य-स्वरूप :

सम्पूर्ण भगवद्-प्रेम

परम पावन श्री स्वामी कृष्णानन्द जी महाराज

(पूर्व-अंक से आगे)

परन्तु, भगवान् ऐसा बहुत कम करते हैं। यदि कोई पर्याप्त ढील प्रदान कर सकता है, तो वे भगवान् के सिवा अन्य कोई नहीं है; तथा कदाचित् वे ही सबसे अधिक ढील प्रदान करते हैं। जीवन के सभी क्षेत्रों में साम, दान, दण्ड, भेद—कार्य के ये चार उपाय हैं। सर्वप्रथम अत्यन्त विनम्र, सरस निर्देश, जो पूर्णतया सकारात्मक हो, ही दिया जाता है। संसार, श्रेष्ठ व्यक्ति तथा भगवान् हमारे साथ यही करते हैं। ''तुम्हारे लिए यही ठीक है'', लोग, संसार यही कहते हैं, तथा भगवान् यही सलाह देते हैं।

परन्तु हमारा मन इस सलाह को सुनने के लिए उद्यत नहीं है—उदाहरणार्थ वेदों, उपनिषदों तथा भगवद्गीता में दी गयी पूर्णतया रचनात्मक तथा सकारात्मक सलाह। शास्त्रोक्तियों के अनुसार, ''यदि तुम भगवान् की ओर उन्मुख होओगे, तो तुम्हें सब-कुछ प्राप्त होगा।'' इसके पीछे लालसा है : ''यदि तुम भगवदोन्मुखी होओगे, तो समस्त विस्मय, सौन्दर्य, ऐश्वर्य तथा शक्तियाँ इत्यादि तुम्हारे अनुगामी होंगे। तुम कुछ व्यर्थ नहीं गँवाओगे, अपितु प्राप्त करोगे। अतः, जब अन्य साधन तुम्हें स्वेच्छापूर्वक अपनाने हेतु तत्पर हैं, तो तुम भौतिक पदार्थों में क्यों आसक्त हो?'' यही दान, प्रलोभन है। हमें कहा जाता है, ''कुछ अद्भुत घटित होने को है, अतः, अन्यत्र मत जाओ।''

यदि हम इस ओर ध्यान नहीं देते, तो प्रकृति के क्रोध-चक्षु खुल जाते हैं : ''तुम मेरी बात की ओर ध्यान नहीं दोगे? क्या तुम्हें पता है, मैं क्या कर सकती हूँ?'' प्रायः, यह चेतावनी आती है। निश्चय ही, कुछ नहीं होगा, किन्तु चेतावनी दी जाती है। यदि हम अच्छी सलाह द्वारा नहीं मानते, तो हमें कष्ट के माध्यम से मानना होगा। यह चेतावनी हमें भली प्रकार दी जाती है।

परन्तु, जीव चेतावनियों की ओर भी ध्यान नहीं देता, तथा सोचता है, ''अरे, यह चेतावनी तो अनेक बार दी जा चुकी है।'' तब, जब सब व्यर्थ हो जाता है, 'दण्ड' अपना कार्य करता है। 'दण्ड' का अर्थ है दण्ड देना। भगवान् हमें कर्मानुसार दण्ड देते हैं, जो किसी भी रूप में हो सकता है, तथा हमें यह ज्ञात नहीं कि वे किस प्रकार की परिस्थिति उत्पन्न करेंगे। वह व्यक्तिगत, भौतिक, मानसिक, सामाजिक, राजनीतिक अथवा किसी भी रूप में हो सकती है। वह भूचाल , आँधी, बाढ़ अथवा प्रलय के रूप में भी हो सकती है। तब, सभी ओर से तीव्र दबाव के कारण ही मन भगवदोन्मुखी होता है। यदि हम पूर्व अथवा पश्चिम के सन्त-चरित्र पढ़ें, तो हमें ज्ञात होगा कि लोग भगवदोन्मुखी क्यों होते हैं।

भगवदोन्मुखी होने का कारण कुछ भी हो सकता है। एक बिल्ली अथवा चूहा भी कारण-रूप में हो सकता है। हवा का झोंका अथवा किंचित् दुर्भाग्य भी हमें भगवान् की

ओर ले जा सकता है। इन समस्त उदाहरणों का सार यही है कि योग भगवान् के प्रति पूर्ण समर्पण की अपेक्षा करता है। पतंजलि सूत्र के अनुसार ''**तीव्रसंवेगानामासन्नः**'' (योगशास्त्र १.२१) : भगवान् के प्रति जब भाव तीव्र होता है, तभी साक्षात्कार सम्भव होता है। प्राथमिक अथवा मध्यम स्थिति का होने पर वह सफल नहीं होगा।

'भगवान् के प्रति तीव्र इच्छा' से क्या तात्पर्य है? क्या हमने किसी समय भगवान् के प्रति तीव्र इच्छा का अनुभव किया है? 'तीव्र' शब्द का विशेष तात्पर्य है। इसका वही तात्पर्य है जो कठोपनिषद् तथा भगवद्गीता में 'अनन्य' शब्द का है। कठोपनिषद् के अनुसार, ''**अनन्यप्रोक्ते गतिरत्र नास्ति**'' (कठोपनिषद् १.२.८)। भगवद्गीता के अनुसार ''**अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते**'' (गीता ९.२२)। 'अनन्य' शब्द का तात्पर्य है, जो किसी अन्य को समर्पित न हो। यह दिव्य भक्ति का पवित्रतम रूप माना गया है। भक्ति दिव्य प्रेम है, तथा प्रेम तभी तीव्र होता है जब उसके समक्ष एक ही वस्तु हो। दो वस्तुओं के समक्ष प्रेम तीव्र नहीं हो सकता। क्या हमारी भावना एक वस्तु-निष्ठ है अथवा एक से अधिक? यदि दो या तीन वस्तुएँ हों, तो प्रेम अथवा भाव कम होगा। यदि अनगिनत वस्तुएँ हैं, तो वह अत्यन्त कम होगा; यह मान्य नहीं है। परन्तु, यदि एक ही वस्तु है, तो तीव्रता सम्भव है। यह भौतिक वस्तु के प्रति प्रेम पर भी लागू होता है, यदि वस्तु एक ही हो—उदाहरणार्थ, धन। एक कृपण अथवा लालची धनाढ्य व्यक्ति के लिए धन अर्जित करना ही लक्ष्य है, तथा वह दिन-रात केवल अधिक से अधिक धन अर्जित करने के विचार में ही रत रहता है। अन्य लोग नाम, यश, सामाजिक प्रतिष्ठा, शक्ति, पद-प्रतिष्ठा इत्यादि के लिए कार्यरत रहते हैं। यदि मन के समक्ष यही एक लक्ष्य है, तथा मन में उसके सिवा अन्य कोई विचार नहीं है—उसे जलपान, मध्याह्न भोजन अथवा शयन की इच्छा नहीं है, तथा वह कहता है कि वह केवल उसी लक्ष्य के लिए कार्यरत रहेगा—उसे उस वस्तु के प्रति सम्पूर्ण भाव कहा जाता है। जब मन कुछ अन्य चाहता है तो हमारे शयन, जलपान अथवा मध्याह्न भोजन का क्या प्रयोजन? हमें उस समय भूख का आभास नहीं होगा। ऐसा नहीं है कि हमारा व्रत है; भूख का आभास ही नहीं है। हमें उस समय किसी अन्य वस्तु की आवश्यकता नहीं है क्योंकि हमारे अन्दर कुछ और निहित है।

यद्यपि भौतिक प्रेम अथवा सांसारिक सम्बन्धों में एकनिष्ठ लक्ष्य की कल्पना सम्भव है, परन्तु इसकी आध्यात्मिक कल्पना करना सम्भव नहीं है क्योंकि ये तथ्य हमें ज्ञात नहीं हैं, हमने उन्हें देखा नहीं है। इसीलिए, हम उनकी कल्पना भी नहीं कर सकते। हमने भौतिक पदार्थ देखे हैं, तथा हम यह समझ सकते हैं कि एक ही पदार्थ के प्रति सम्पूर्ण प्रेम का क्या तात्पर्य है। परन्तु, भगवान् के प्रति सम्पूर्ण प्रेम का क्या तात्पर्य है? मन के लिए यह अकल्पनीय है, मात्र इसीलिए क्योंकि भगवान् हमसे बाहर न होने के कारण कोई वस्तु अथवा पदार्थ नहीं हैं, तथा, इसीलिए, हम उन्हें सामान्य भौतिक प्रेम-भाव से प्रेम नहीं कर सकते।

भक्ति-शास्त्र, प्रकरण, जिनमें दिव्य प्रेम का उल्लेख है, वे अपरा-भक्ति तथा परा-भक्ति अथवा गौण-भक्ति तथा रागात्मिका-भक्ति, इत्यादि के बारे में बताते हैं। गौण-भक्ति, अथवा अपरा-भक्ति का तात्पर्य है भक्ति अथवा प्रेम जिसमें उपसाधनों अथवा साधनों की आवश्यकता हो। हमें

अपना स्नेह अथवा प्रेम जाग्रत करने के लिए कुछ उपकरणों की आवश्यकता होती है। उपकरण अथवा साधन के अभाव में यह कार्य नहीं करेगा। उदाहरण के लिए, कुछ संगीतज्ञ वाद्य के बिना नहीं गा सकते। उन्हें हारमोनियम, वायलिन, वीणा अथवा अन्य किसी वाद्य की आवश्यकता होती है, क्योंकि उसके अभाव में वे सुन्दर प्रस्तुति नहीं दे सकते। परन्तु, कभी उल्लास में हम बिना वाद्य के भी गाना आरम्भ कर देते हैं, तथा बिना संगीत के नृत्य करना भी आरम्भ कर देते हैं। भक्त रागात्मिका-भक्ति अथवा परा-भक्ति की चर्चा करता है जो भक्ति अथवा प्रेम का वास्तविक स्वरूप है, जिसमें किसी प्रकार की संगत की आवश्यकता नहीं होती। उसे समाज की नैतिक तथा आचार-सम्बन्धी नियमावली की चिन्ता भी नहीं होती, तथा वह मानव-परम्परा की समस्त सीमाओं का उल्लंघन कर जाता है। यदि सत्य कहा जाये, तो इसे किसी प्रकार की लज्जा भी नहीं है। हम इसे लज्जा-रहित कह सकते हैं। यह सम्पूर्ण प्रेम है। पूर्णता को प्राप्त होने पर प्रेम लज्जा-रहित हो जाता है। वह सांसारिक हो, अथवा आत्मा के क्षेत्र में, उसका व्यवहार समान होता है। ऐसा तब होता है जब पदार्थ के प्रति आसक्ति सम्पूर्ण व्यक्तित्व को प्लावित कर देती है।

'राग' का तात्पर्य है स्वाद, सम्पूर्ण व्यक्तित्व का पदार्थ के प्रति आकर्षण। हम पदार्थ के गुणों को अपना लेते हैं। हम अभीष्ट पदार्थ-रूप हो जाते हैं। उसका विचार करते-करते हम तद्रूप हो जाते हैं। हम अपनी पहचान भूल जाते हैं। हम जिस वस्तु की इच्छा कर रहे हैं, उसी से तद्रूप हो जाते हैं। यह रागात्मिका-भक्ति है। गोपियों की यही स्थिति थी। यदि हम श्रीमद्भागवत के दशम स्कन्ध में रासपंचाध्यायी पढ़ें, तो हमें वास्तविकता समझ आयेगी। वे गोपियाँ अथवा व्यक्ति नहीं थीं; वे स्वयं कृष्ण-रूप थीं। वे स्वयं अपना प्रेम-पदार्थ थीं। रागात्मिका-भक्ति अथवा परा-भक्ति में प्रेमी तथा अभीष्ट में भेद समाप्त हो जाता है। एक गोपी ने पूतना-वध किया, दूसरी ने वृत्तासुर-संहार किया, तीसरी गोपी ने बाँसुरी-वादन किया इत्यादि, मानो वे स्वयं कृष्ण थीं।

प्रेम की पराकाष्ठा में, हम जिसे प्रेम करते हैं, उससे तद्रूप हो जाते हैं। वास्तव में, वहाँ प्रेम नहीं होता, क्योंकि सामान्य भाषा में, 'प्रेम' का तात्पर्य हमारी भावनाओं की किसी बाह्य वस्तु की ओर गतिशीलता है, परन्तु जब हम स्वयं वही वस्तु हो गये हैं, तो हमारे प्रेम की गतिशीलता कहाँ है? बस इतना है कि हम पागल हो गये हैं। सभी महान् भक्त भगवद्-प्रेम के प्रति पागल थे, किसी एक भाव से ग्रस्त होने पर हम पागल हो जाते हैं, चाहे वह लौकिक हो अथवा आध्यात्मिक।

अत:, इस प्रकार की प्रेम-तीव्रता, योगाभ्यास हेतु अथवा भगवद्-साक्षात्कार हेतु आवश्यक है। हममें से कितने इस योग्य हैं, यह कल्पना करना कठिन है। इस विषय पर यदि थोड़ा विचार करें, तो यह ज्ञात होगा कि हमें दिनों तथा महीनों तक व्याकुल होने पर भी कोई प्राप्ति क्यों नहीं हो रही है। दुर्भाग्यवश, हम धोखे में हैं। यद्यपि हम ठीक प्रकार से इस धोखे के कारणों को नहीं जान सकते, यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि एक प्रकार का भ्रम ऐसा है जिसमें हम फँसे हुए प्रतीत होते हैं, तथा यह भ्रम तब क्रियाशील होता है जब हमारे अन्वेषण की वस्तु कुछ और दिखाकर छुपा दी जाती है जिसे

उसके समान ही अच्छा अथवा श्रेष्ठतर दिखाया जाता है। यह सभी के साथ होता है।

हमारे अन्वेषण की वस्तु हमसे पूर्णतया छुपा दी गयी है; वह हमारे समक्ष नहीं है। इतना ही नहीं, हमें यह भी विचार नहीं करने दिया जाता कि उसे छुपा दिया गया है। हमारे मन से पूर्णतया उसे हटा दिया गया है, जिससे सब-कुछ सामान्य लगे।

संसार द्वारा प्रदत्त वही फॉर्मूला हम रटते रहते हैं, तथा मृत्युपर्यन्त हम वही रटते रहेंगे। अत:, आध्यात्मिक साधक होने के नाते हमारे समक्ष दो विनाशकारी वस्तुएँ आ सकती हैं। हम अपना लक्ष्य भूल सकते हैं, यह अत्यन्त बुरा होगा, परन्तु इससे भी बुरा घटित हो सकता है। हम इसके विपरीत कुछ याद रख सकते हैं, तथा उसे अपना लक्ष्य मान सकते हैं। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि कोई योगाभ्यास नहीं कर सकता, तथा कोई भगवान् को प्रेम नहीं कर सकता।

यद्यपि योग-प्रणाली '**तीव्रसंवेगानामासन्न:**' की आवश्यकता पर बल देती है, मानसिक प्रयास ऐसी तीव्रता उत्पन्न नहीं कर सकता। जब भी हम इस विषय पर विचार करते हैं, हम व्याकुल हो जाते हैं। मानवीय प्रयास द्वारा सम्पूर्ण भगवद्-प्रेम सम्भव नहीं है। उसके लिए मानव-प्रयास पर्याप्त नहीं है, क्योंकि यह जलते हुए ईंधन को तिनके द्वारा उठाने के प्रयास के समान होगा। हम यह नहीं कर सकते। हमारे लिए यह असम्भव है। महान् आचार्य शंकर भी इस प्रश्न का भली प्रकार उत्तर नहीं दे पाये थे, जब उन्होंने ब्रह्म-सूत्र की व्याख्या करते समय स्वयं इस बात को उठाया था। जीव में ज्ञान किस प्रकार उदय होता है? यह मानव-प्रयास द्वारा सम्भव नहीं है, क्योंकि ज्ञान की ओर प्रयास तभी सम्भव है जब ज्ञान हो, तथा हम पूछ रहे हैं कि ज्ञानोदय किस प्रकार होता है? व्यक्ति में भगवद्-प्रेम किस प्रकार जाग्रत हो सकता है? यह प्रयास द्वारा सम्भव नहीं है, क्योंकि भगवान् की शक्ति को उजागर करने की शक्ति किसमें है? अत:, अपने सिद्धान्त के विरुद्ध महान् अद्वैती शंकर स्वयं कहते हैं कि यह ईश्वर-अनुग्रह है। अवधूत-गीता में दत्तात्रेय कहते हैं : "**ईश्वरानुग्रहादेव पुंसाम् अद्वैतवासना**" (अवधूत गीता १.१)। पदार्थों की एकता का भाव भगवद्-कृपा द्वारा ही उदय होता है। "**ईश्वरानुग्रहादेव**"—मात्र उसी के द्वारा, तथा किसी अन्य उपाय द्वारा नहीं। यह समझना अत्यन्त कठिन है कि इसका क्या तात्पर्य है।

अत:, एक ओर प्रतीत होता है कि कठोर परिश्रम आवश्यक है, दूसरी ओर ऐसा प्रतीत होता है, मानो हमें दिव्य कृपा का परोक्ष अनुभव करना है, सदैव पुकार की प्रतीक्षा करते हुए, तथा उस प्रकाश तथा कृपा के लिए आतुर, जो हमारे ऊपर किसी भी समय हो सकती है। ऐसा जो भी उपाय जिसके द्वारा ऐसा भगवद्-प्रेम हमारे अन्दर उदय हो, आवश्यक है, तथा अन्य कोई मार्ग नहीं है। "**नान्य: पन्था विद्यतेऽयनाय**" (श्वेताश्वतर उपनिषद् ३.८): हमारे लिए अन्य कोई मार्ग नहीं है। यह प्रत्येक व्यक्ति के लिए परम आवश्यक है। जब उस तीव्र भाव का उदय होता है, तब चमत्कारी अनुभव स्वत: ही होते हैं, जो योग का परम लक्ष्य है।

(समाप्त)

(अनुवादिका : मेधा सचदेव)

मानव से ईश–मानव :

अन्तिम दिन

श्री एन. अनन्तनारायणन्

(पूर्व–अंक से आगे)

इतने में, शिवानन्द कुटीर के भीतर ही गुरुदेव के शरीर को पद्मासन में चौकड़ी लगा कर सीधा बैठा दिया गया था, दोनों हाथों की उँगलियाँ परस्पर आबद्ध करके हाथों को पाँवों के ऊपर रख दिया गया था। कुटीर के बरामदे में, भक्त अपने अश्रुओं एवं सुबकने को रोकने का असफल प्रयत्न करते हुए बैठ कर धीमे स्वर में महामन्त्र कीर्तन करने लगे थे। धीरे–धीरे आश्रम के अन्तेवासी अँधेरे में नीचे आ कर दु:खद मौन सहित गुरुदेव की पावन देह के समक्ष नतमस्तक प्रणाम करने लगे।

आगामी प्रातः, समाचारपत्रों और रेडियो द्वारा समस्त संसार में समाचार प्रसारित हो गया। सब ओर से सहानुभूति के, शोकाभिव्यक्ति के, हृदय–विदारक पीड़ा की अभिव्यक्ति के असंख्य पत्र आने लगे। समस्त ऋषिकेश इस दु:खद समाचार से स्तब्ध था और वह महान् सन्त, जिन्होंने अपने विस्मयजनक आध्यात्मिक कार्यों से सम्पूर्ण जगत् में ऋषिकेश का नाम उज्ज्वल किया था, उनके समक्ष श्रद्धापूर्ण नमन करने के लिए स्थानीय लोगों का विशाल जन–समूह विशद नदी के प्रवाह समान वेग से उमड़ने लगा।

स्वामी जी की पावन देह को अब प्रथम पारम्परिक स्नान करवाया गया और नया वस्त्र लपेट दिया गया। मस्तक पर तिलक लगा कर कण्ठ में पुष्प–माला पहना दी गयी। अब तक दर्शनार्थियों की लम्बी कतार ऊपर सड़क तक लग गयी थी। दिन–भर और फिर देर रात तक, अन्तिम दर्शन करने के लिए भिन्न–भिन्न स्थानों से लोग आते रहे।

मंगलवार, १६ जुलाई को, आश्रम के आस–पास के गंगा–तट का सम्पूर्ण क्षेत्र वस्तुतः लोगों का विशाल समूह ही था। गुरुदेव कुटीर से स्वामी जी के नश्वर शरीर के बाहर लाये जाने की प्रतीक्षा में खड़े हुए जन–समूह की अपार भीड़ से गंगा के साथ–साथ का सारा स्थान भरा हुआ था। प्रातः साढ़े दश बजे, शंखों और घण्टों के नाद सहित गुरुदेव के शरीर को उनके निजी सेवकों द्वारा अत्यन्त कोमलता सहित उठा कर कुटीर से बाहर लाया गया। द्वार से बाहर निकलते समय आश्रम की एक आत्मीय आध्यात्मिक संस्था—दर्शन महाविद्यालय द्वारा वैदिक मन्त्रोच्चारण किया जाने लगा। धीरे–धीरे और अत्यन्त सावधानी सहित गुरुदेव की पावन देह को ऊपर झण्डा चौक पर, आश्रम के अतिथि कक्ष के सामने से गंगा–तट के साथ पूर्वाभिमुख हो कर ले चले। राजवंशी घाट पर आ कर वे गंगाजी की ओर नीचे सीढ़ी उतरने लगे और फिर घाट पर पहले से तैयार रखी गयी चारपाई पर गुरुदेव के

शरीर को रख दिया। फिर वैदिक मन्त्रों के साथ देह का पारम्परिक विधि से अभिषेक किया गया, सर्वप्रथम विविध प्रकार की सामग्रियों से और फिर अन्त में गंगाजल के साथ। इस अभिषेक के उपरान्त पुष्पों से सुसज्जित पालकी में बैठा कर स्वामी जी के शिष्यों ने अपने कन्धों पर उठा लिया, और शोभायात्रा के रूप में आश्रम क्षेत्र में स्थित श्री विश्वनाथ मन्दिर की ओर बढ़ने लगे। महामन्त्र संकीर्तन तथा वैदिक मन्त्रों के बीच-बीच में 'स्वामी शिवानन्द महाराज जी की जय' और 'सद्गुरुदेव की जय' के उच्च स्वर में जयघोष से समस्त वातावरण गूँज उठता था। समाधि के लिए चयन किये गये स्थान पर पहुँचने पर पालकी को नीचे उतार कर पहले उपस्थित लोगों की भीड़ की ओर मुख कर के रख दिया गया। एकत्रित जन-समूह की सन्तुष्टि के लिए स्वामी जी की पावन देह की आरती की गयी। फिर शरीर को पालकी से बाहर निकाल लिया गया और पटरे पर रख कर भीतरी कक्ष तक ले जाने वाले सँकरे गलियारे से आगे बढ़े। यहाँ पहुँच कर समाधि के लिए बनाये गये गड्ढे को पुजारी द्वारा पारम्परिक विधि से पूर्णतया तैयार कर दिये जाने तक स्वामी जी के शरीर को अन्तिम दर्शन के लिए रख दिया गया।

शीघ्र ही गड्ढा तैयार हो गया। पावन मन्त्रोच्चारण सहित, गुरुदेव के शरीर को भीतर लाया गया और अत्यन्त कोमलता सहित अन्तिम विश्रामस्थली में नीचे उतार दिया। ध्यानमुद्रा में आसीन, महान् सन्त के भौतिक आवरण को अन्तिम पूजा धरती के वक्ष में समर्पित की गयी। गुलाब जल में मिश्रित सुगन्धित चन्दन का घोल समस्त शरीर पर डाला गया। चन्दन की लकड़ी का चूर्ण, कर्पूर, नमक और विभूति से गड्ढे को भरना प्रारम्भ कर दिया गया। जब यह मिश्रण वक्षस्थल और कन्धों तक पहुँच गया तो विक्षुब्ध शिष्य अन्तिम विदाई असह्य हो जाने के कारण अश्रु बहाते हुए अपने प्रिय गुरुदेव जो शीघ्र ही उनकी दृष्टि से सदैव के लिए ओझल हो जाने वाले थे, उनकी अन्तिम झलक पाने के लिए ऊपर गलियारे में आ गये। अपराह्न तक समाधि देने का कार्य सम्पन्न हो गया और स्थान को बन्द कर दिया गया। गंगाजल से भरा हुआ कलश समाधि स्थल के ऊपर रख दिया गया और दीप प्रज्वलित कर दिया गया।

अपराह्न का बहुत समय बीत चुका था। श्वेत बादलों से युक्त नीले आकाश में सूर्य चमक रहा था। चारों ओर निकटवर्ती पर्वत नूतन पत्तों से लदे हुए वृक्षों से आच्छादित होने से हरे-भरे दिखायी दे रहे थे। सर्वत्र मौन व्याप्त था। अन्तिम कर्म समाप्त होने के उपरान्त जब भक्त लोग स्नान करके गंगाजी से बाहर निकल कर घाट पर आये तो एक अद्भुत शान्ति से सबके हृदय भर उठे। मानो उन सभी के अन्तर्मनों में गुरुदेव की पावन आत्मा की विद्यमानता की अनुभूति हो रही थी। जो दिन अभी कुछ ही समय पूर्व अन्धकार से भरा प्रतीत हो रहा था, वही अब एक नवीन प्रकाश से चमकता अनुभव होने लगा।

(क्रमशः)

(अनुवादिका : स्वामी शिवाश्रितानन्द माता जी)

शिवानन्द ज्ञानकोष :

जीवन्मुक्त

परम पावन श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज

(पूर्व-अंक से आगे)

समाधि ज्ञानी और व्यावहारिक ज्ञानी में ज्ञान तो एक जैसा ही रहता है, किन्तु समाधि ज्ञानी व्यावहारिक ज्ञानी की अपेक्षा अधिक आनन्दानुभूति करता है। समाधि ज्ञानी वह है जो ब्रह्म में तल्लीन रहता है। उसके लिए नाम-रूप अदृश्य हो जाते हैं। उसके लिए संसार का पूर्णतया अभाव हो जाता है। वह कर्म करने में नितान्त असमर्थ हो जाता है। वह एक मुजूब है। वह एक परमहंस है। समाधि ज्ञानी को तो भोजन भी बलपूर्वक देना पड़ता है।

यदि एक व्यावहारिक ज्ञानी की उँगली कट जाये तो वह पीड़ा का अनुभव करेगा; किन्तु समाधि ज्ञानी की यदि टाँग भी काट ली जाये तो भी उसे पीड़ा का बिलकुल भी अनुभव नहीं होगा। मुल्तानवासी शम्स तबरेज़ का उदाहरण इस तथ्य की सत्यता को प्रकट करता है। जब उसकी खाल खींची गयी तो वह हँसता हुआ 'अनल हक, अनल हक' कहता रहा। अनल हक का अर्थ है—'मैं वही हूँ', जिसको हिन्दू 'सोऽहं' कहते हैं।

एक व्यावहारिक ज्ञानी को नाम-रूप दृष्टिगोचर होते हैं। वह पहचानता है कि यह विष्ठा है, यह चन्दन है, यह मूर्ख है, यह विद्वान् है, यह अधिकारी है, यह दुष्ट है और यह ईमानदार है। किन्तु वह इन सबसे अप्रभावित रहता है। न वह सफलता-प्राप्ति पर प्रसन्न होता है और न असफलता-प्राप्ति पर दु:खी। न ही ईमानदार व्यक्ति से उसे राग है और न ही दुष्ट से घृणा। तात्पर्य यह है कि वह समदर्शी होता है।

प्रारब्धवश वह लोकसंग्रही बन जाता है। जिस प्रकार बढ़ई अपने यन्त्रों का उपयोग करता है वैसे ही यह अपने मन और शरीर का यन्त्रवत् प्रयोग करता है। कार्यरत रहते हुए भी उसकी ब्रह्ममयी चेतना का लोप एक क्षण के लिए भी नहीं होता। वह चैतन्य स्वरूप में अथवा शुद्ध चेतना में सदा स्थित रहता है।

व्यावहारिक ज्ञानी समग्र संसार को अपने भीतर ही देखता है। आपकी भाँति वह जगत् को अपने बाहर नहीं देखता। वह दिव्य दृष्टि अथवा ज्ञान-चक्षुओं से देखता है न कि इन चर्म-चक्षुओं से। सशक्त आत्मिक दृष्टि से वह समस्त जगत् को सृष्टि की प्रक्रिया सहित देखता है। वह मानव के सूक्ष्म शरीर, संस्कारों सहित कारण शरीर, प्राण, मन और अध्यात्म प्रभामण्डलों को भी देख लेता है। व्यावहारिक बुद्धि वाले सांसारिक मनुष्य के लिए मन से यह जानना अत्यन्त कठिन है कि कर्म करते हुए भी ज्ञानी इस भौतिक जगत् को कैसे देख सकता है?

जीवन्मुक्त की जीवन-पद्धति और कार्य-प्रणाली

जीवन्मुक्त एक अव्यवस्थित मनुष्य नहीं होता। वह समाज और शास्त्र के नियमों से बँधा नहीं होता। फिर भी वह धर्म-च्युत नहीं होता। जो-कुछ भी वह करता है, वह धर्मशास्त्रों के अनुसार ही होता है। वह स्वाभाविक ही उत्तम अथवा ठीक कार्य ही करता है। एक दक्ष नर्तक कभी भी कोई असंगत पग नहीं उठाता। इसी प्रकार का जीवन है जीवन्मुक्त का, जब वह कार्य करता है।

ज्ञानी इच्छा, आसक्ति, अहंकार, परिश्रम एवं कर्तृत्व भावना से रहित हो कर कर्म करता है। एक बालक के सदृश उसके कार्य न शुभ और न ही अशुभ होते हैं।

जीवन्मुक्त एक अबोध बालक के समान कार्य करता है। बुराई और भलाई का ज्ञान उसमें स्वाभाविक ही होता है न कि शास्त्रों पर आधारित। उसमें अहंकार का नाश हो चुका होता है। कर्म उसका स्पर्श नहीं कर सकते क्योंकि

वह कर्मों से परे (ऊपर) होता है। लोक-शिक्षा के लिए चाहे वह (विधि) कर्म करे अथवा निषिद्ध कर्मों का त्याग करे।

जीवन्मुक्त जनता द्वारा की गयी आलोचना अथवा निन्दा की ओर ध्यान नहीं देता। आक्रमण किये जाने पर भी वह शान्तचित्त रहता है। उस पर अत्याचार करने वालों को भी वह आशीर्वाद देता है। वह सर्वत्र स्वात्मा के दर्शन करता है।

उसकी विशिष्टता उसकी आन्तरिक मन:स्थिति में है, जिसे अन्य जन नहीं समझ सकते। ईश्वर उसके माध्यम से अपना दिव्य कर्म करता है।

शारीरिक नग्नता एवं मानसिक नग्नता

यह आवश्यक नहीं है कि एक ब्रह्मज्ञानी अथवा जीवन्मुक्त विलक्षण (अपूर्व) बुद्धिमान् व्यक्ति हो। वह धारावाहिक सुवक्ता, व्याख्याकार, आचार्य या प्रोफेसर हो, यह आवश्यक नहीं है। परन्तु वह शान्त, गम्भीर और समचित्त होता है। वह मितभाषी और मौनी होता है। उसका मौन ही उत्तम वक्तृत्व है। उसके पास दिव्य ज्ञान और आन्तरिक ज्ञान है। उसकी उपस्थिति में सभी संशयों की निवृत्ति हो जाती है।

गृहस्थी लोग जीवन्मुक्तको पहचानने में गलती कर जाते हैं। वह केवल बाह्य लक्षणों को देख कर निर्णय करते हैं। इस विषय में शिक्षित व्यक्ति भी भूल कर जाते हैं।

एक साधु भले ही नग्नावस्था में रहता हो, भले ही वह अपने पास कुछ न रखता हो, भले ही वह अपने हाथों को ही भिक्षा-पात्र के रूप में प्रयोग करता हो और वृक्ष के नीचे सोता हो, भले ही वह जंगल में रहता हो, किन्तु हो सकता है कि वह एक महान् दुराचारी (दुरात्मा) हो। वह आन्तरिक और बाह्य आसक्तियों से पूर्ण एक महान् सांसारिक व्यक्ति हो। अफीम (गांजा) पीने के लिए उसे आठ आने मिल जायें तो वह खुशी के मारे नाचने लगता हो। उसका मन क्षुब्ध और विचलित (अशान्त) रहता हो। दूसरी ओर एक व्यक्ति नगर की भीड़ में रहता हो। वह एक बड़े अधिकारी (बाबू) का जीवन व्यतीत करता हो। वह विविध प्रकार के स्वादिष्ट भोजन खाता हो। वह आधुनिक फैशन के वस्त्र धारण करता हो। फिर भी हो सकता है कि उसको किसी भी वस्तु से आसक्ति और लालसा न हो। श्री रामानुज ऐसे भोग-विलास के मध्य रहे। आत्म-साक्षात्कार प्राप्त व्यक्तियों के कई ऐसे उदाहरण हैं जो हाथी, अश्व और सभी राजसी वैभव के रहते हुए भी इन सभी बाह्य पदार्थों से अप्रभावित रहे। इन असंख्य कार्य-कलापों के मध्य रहते हुए भी वह सदा ज्ञाननिष्ठा और स्वरूप-स्थिति में रहते थे। यही सर्वांग-विकास है। यही श्रीमद्भगवद्गीता का सार है। यही भगवान् कृष्ण की प्रमुख शिक्षा है।

आवश्यकता तो मानसिक नग्नता की है। ज्ञान तो पूर्णरूपेण एक आन्तरिक स्थिति है। बाह्य चिह्न विश्वसनीय कसौटी नहीं है।

ज्ञानी का व्यवहार रहस्यमय होता है। एक जीवन्मुक्त ही जीवन्मुक्त को जान सकता है। भगवद्गीता और विभिन्न शास्त्रों में जो ज्ञानी का विवरण मिलता है वह तो अपर्याप्त, अपूर्ण और अधूरा है। सीमित मन उसकी अवस्था (स्थिति) की कल्पना नहीं कर सकता और सीमित वाणी उसकी व्याख्या नहीं कर सकती। वह तो अपनी मौलिक (शाश्वत) महत्ता से देदीप्यमान रहता है।

कभी वह सर्वज्ञ की भाँति प्रतीत होता है। कभी वह अज्ञ अर्थात् अज्ञानी की तरह प्रतीत होता है। वह पूर्ण रूप से जानता है कि कब एक ब्रह्मनिष्ठ की तरह व्यवहार करना चाहिए, और कब एक मूर्ख की तरह। आप उस पर अपना निर्णय मत थोपिए। यदि आप उसके पास श्रद्धा, भक्ति तथा जिज्ञासा से जाते हैं तो वह आपको परम ज्ञान का मर्म समझा देगा। यदि आप उसके पास बुरे उद्देश्य (बुरी नीयत) से जाते हैं तो वह पागल की तरह व्यवहार करेगा और आप धोखे में रह जायेंगे। इससे आपकी ही महान् हानि होगी।

(क्रमशः)

(अनुवादक : श्री स्वामी अर्पणानन्द जी महाराज)

बाल जगत्

नि:स्वार्थ सेवा

प्रिय अमृत पुत्रो!

कर्मयोगी को मिलनसार, प्रिय तथा सामाजिक बनना चाहिए। उसमें परिपूर्ण अनुकूलनशीलता, सहनशीलता, सहानुभूति, विश्व-प्रेम तथा करुणा होनी चाहिए। उसे दूसरों की आदतों एवं आचरण के अनुकूल बनने में समर्थ होना चाहिए। उसका हृदय व्यापक तथा उसमें समदृष्टि होनी चाहिए। उसका मन शान्त तथा सन्तुलित होना चाहिए। दूसरों के कल्याण में उसको आह्लादित होना चाहिए। सारी इन्द्रियाँ उसके अधीन रहनी चाहिए। उसे बहुत ही सरल जीवन बिताना चाहिए। उसको अपमान, अनादर, अपयश, कटु शब्द, शीत, उष्ण तथा व्याधि के दु:खों को सहन करना चाहिए। उसमें सहनशीलता होनी चाहिए। उसे स्वयं में, ईश्वर में, सद्ग्रन्थों तथा गुरु के शब्दों में दृढ़ निष्ठा होनी चाहिए। ऐसा व्यक्ति ही कर्मयोगी बनता है तथा शीघ्र ही ईश्वर को प्राप्त करता है।

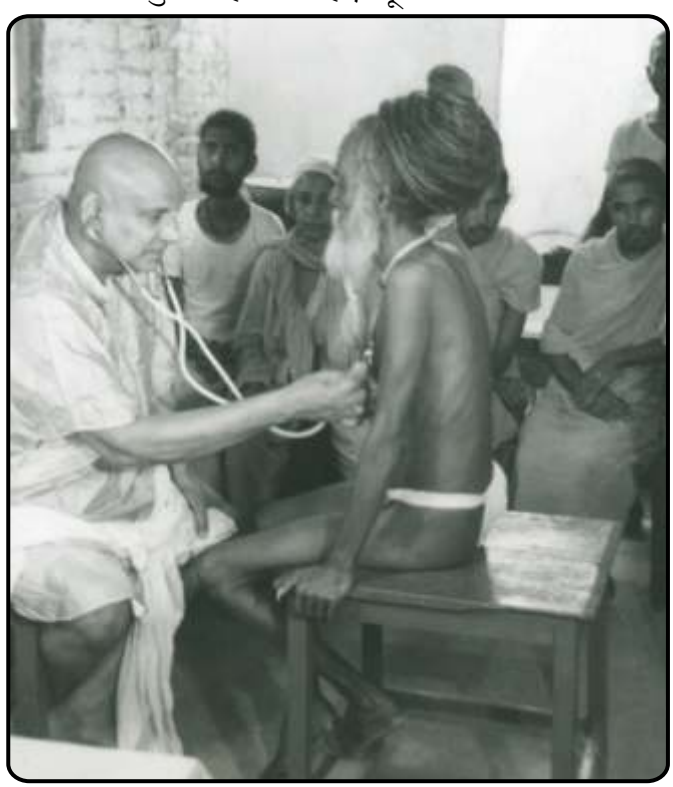

जो व्यक्ति विश्व की सेवा करता है, वह स्वयं की ही सेवा करता है। जो दूसरों की

सेवा करता है, वह अपनी भी सेवा करता है। यह महत्त्वपूर्ण बात है। जब आप किसी व्यक्ति की सेवा करें अथवा अपने देश की सेवा करें तो सदा ऐसी भावना बनाये रखें कि ईश्वर ने आपको यह सुअवसर प्रदान किया है जिससे सेवा के द्वारा आप स्वयं का सुधार कर सकें। उस व्यक्ति के प्रति कृतज्ञ बनिए जिसने आपको सेवा करने के लिए सुअवसर प्रदान किया है।

ज्ञान की ज्योति की प्राप्ति के लिए कर्मयोग मन को तैयार करता है। यह हृदय को विकसित बनाता है तथा एकता के मार्ग में जो प्रतिबन्ध हैं, उन्हें नष्ट कर डालता है। चित्त-शुद्धि के लिए कर्मयोग सक्रिय साधना है।

स्वामी शिवानन्द

सद्गुणों का अर्जन

भलाई (Goodness)

भलाई किसी भी प्रकार से भला अथवा अच्छा होने का गुण है, विशेषत: यह दया, परोपकारिता, नैतिकता आदि गुणों से सम्पन्न होना है। भलाई परोपकारिता, करुणा अथवा दया का कार्य है।

सदा सर्वदा, प्रत्येक स्थान पर जितने अधिक मनुष्यों की जितनी अधिक भलाई, जितने अधिक प्रकार से आप कर सकते हैं, उसे पूर्ण उत्साह, शक्ति, प्रेम तथा रुचि के साथ करिए।

बुराई के बदले भलाई करिए। यह सच्चे मनुष्य का लक्षण है। प्रेम प्रेम को उत्पन्न करता है, घृणा घृणा को।

दूसरों की भलाई करने तथा उन्हें प्रसन्न करने से आपको भी भलाई एवं प्रसन्नता प्राप्त होती है।

अच्छे, उच्च तथा दिव्य विचारों को रखिए। बुरे विचारों के विरुद्ध अपने मन के द्वार उसी प्रकार बन्द रखिए, जिस प्रकार आप शत्रुओं, चोर-डाकुओं के विरुद्ध घर के द्वार बन्द रखते हैं। सदैव भले कार्य करिए। अब बुराई आपके मन में प्रवेश नहीं कर सकती है।

''भले बनो, भला करो।'' सम्पूर्ण नीतिशास्त्र एवं सदाचरण इस उक्ति में निहित है। यदि आप इसका अभ्यास करेंगे, तो शीघ्र ही भगवद्-साक्षात्कार प्राप्त करेंगे।

स्वामी शिवानन्द

दुर्गुणों का नाश

लालच (Greed)

लालच मन को सदैव अशान्त रखता है। एक लाख रुपये का स्वामी दस लाख रुपये पाने की योजना बनाता है। दस लाख का स्वामी सौ लाख के लिए प्रयास करता है। लालच अशमनीय है। इसका अन्त नहीं है। यह अनेक सूक्ष्म रूप धारण करता है। एक व्यक्ति नाम, यश एवं प्रशंसा के लिए उत्कण्ठित रहता है। यह भी लोभ एवं लालच है।

एक लालची व्यक्ति आध्यात्मिक जीवन हेतु सर्वथा अनुपयुक्त है।

विचार, ईमानदारी एवं नि:स्वार्थता द्वारा समस्त प्रकार के लालच का नाश करके शान्ति प्राप्त करिए।

स्वामी शिवानन्द

श्रद्धा–विश्वास का पारितोषिक

बहुमूल्य आभूषणों से अलंकृत, एक नन्हा राजकुमार सरोवर के निकट खड़ा हुआ था। इतने में ही एक वृद्ध डाकू वहाँ आ गया, जिसकी लम्बी दाढ़ी थी और उसके हृदय में भरी हुई दुष्ट भावना उसके नेत्रों से स्पष्ट झलक रही थी। उसने बेसुध होकर धरती पर गिर जाने का अभिनय करते हुए कष्ट से चीत्कार किया। अपने राजकीय स्वभाव के अनुकूल राजकुमार तीव्रता से उस वृद्ध की ओर बढ़ा और उसके स्वास्थ्य के सम्बन्ध में चिन्तातुर हो कर पूछा। वृद्ध ने कहा, 'ओ बालक, मैं प्यास से मरा जा रहा हूँ, दया करके मुझे पीने के लिये कुछ जल दो।'

राजकुमार ने तुरन्त उत्तर दिया, 'मैं अभी लेकर आता हूँ' और वह सरोवर की ओर चल दिया।

'ऐसे नहीं, मेरे प्यारे बच्चे,' वृद्ध ने कहा, 'जो जल तुम मुझे दोगे, सम्भव है वह मेरे जीवन का अन्तिम घूँट हो, तुम्हारी तो अभी मन्त्र दीक्षा भी नहीं हुई है और इसलिये तुम्हें अभी भगवान् की विद्यमानता की अनुभूति नहीं हुई है। यदि तुम पावन मन्त्र से दीक्षित हो जाओ तो भगवान् तुम्हारे समक्ष प्रकट होने को विवश हो जायेंगे और तुम्हारे हाथ से दिया जाने वाला जल भी पवित्र हो कर मेरे समान साधु के लिए संसार त्याग करते हुए जाने के अन्तिम क्षण में ग्रहण करने के योग्य हो जायेगा।'

बालक ने कहा, 'कृपया मुझे अति शीघ्र मन्त्र दीक्षा दे दें।'

वृद्ध ने कहा, 'पुत्र, शीघ्र जाओ और उस सरोवर में डुबकी लगाओ, किन्तु जाने से पहले अपने यह बहुमूल्य

आभूषण उतार कर तट पर रख देना। अपना श्वास रोक कर तब तक जल के भीतर ही शिर डुबाये रहना, जब तक मैं तुम्हें बाहर आने के लिये न कहूँ। मैं इस बीच निरन्तर शुद्धिकरण मन्त्रों का जप करता रहूँगा जिससे कि मन्त्र दीक्षा अत्यधिक प्रभावशाली हो जाये।'

जैसे कहा गया था उस भोले बालक ने वैसे ही किया। सारे आभूषण उस वृद्ध के पाँव के पास पड़े हुए थे अतः उसका मन प्रसन्नता से भर उठा था। राजकुमार सरोवर के भीतर उतर गया और जैसे ही उसने अपना शिर जल के भीतर किया, डाकू समस्त आभूषण ले कर भाग गया।

राजकुमार विशेष प्रकार के सुदृढ़ तत्त्व का बना था। अनमोल क्षण बीत रहे थे किन्तु गुरु के बुलाने की आवाज़ नहीं आयी थी। गुरु की पुकार सुने बिना वह जल में से अपना शिर निकालने वाला नहीं था। निरन्तर संघर्ष करते करते वह बेसुध होने लगा। प्राणदायी वायु के स्थान पर ठण्ढा जल उसके भीतर प्रवेश करने लगा।

किशोर भक्त की सुदृढ़ निष्ठा और पूर्ण समर्पण ने भगवान् नारायण का हृदय द्रवित कर दिया। वे अपना दिव्य धाम छोड़ कर नन्हें राजकुमार के पास पहुँच गये।

सरोवर के निकट खड़े हो कर उन्होंने राजकुमार से कहा, ''मेरे बच्चे, मैं समस्त जगत् का स्वामी भगवान् नारायण हूँ, तुम्हारी भक्ति से मैं अत्यन्त प्रसन्न हूँ, मेरे बच्चे, आओ, अब जल से बाहर आ जाओ।''

किन्तु बालक शिर उठाने वाला नहीं था। उसने मन ही मन कहा, ''आप भले ही कोई भी होओ, जब तक मेरे गुरु नहीं पुकारते, मैं शिर बाहर नहीं निकाल सकता।''

नारायण तत्काल उस डाकू के पास पहुँच गये। पुलिस अधिकारी और बालक के पिता का रूप धारण कर उन्होंने डाकू को पकड़ लिया और उसकी पिटाई करते हुए बोले, ''तुमने मेरे बच्चे को विवश किया है कि वह तुम्हारे पुकारने तक जल से बाहर शिर न निकाले, अब अति शीघ्र भाग कर जाओ और तत्काल जल से बाहर निकलने के लिये उसे पुकारो।''

वह दोनों तुरन्त गये और डाकू ने पुकार कर कहा, ''बच्चे, आओ, अब जल से बाहर आ जाओ!''

बालक ने जैसे ही शिर बाहर निकाला, डाकू का शिर धरती पर गिर गया। बालक को अपने एकनिष्ठ समर्पण, गहन श्रद्धा और विश्वास का परम पारितोषिक—नारायण भगवान् के दर्शन प्राप्त हुए।

स्वामी शिवानन्द

डोनेशन सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण सूचना

प्रशासनिक कारणों तथा वर्तमान अकाउण्टिंग व्यवस्था (Accounting System) को थोड़ा सरल बनाने के उद्देश्य से, १० मार्च २०२१ को आयोजित 'बोर्ड ऑफ मैनेजमेण्ट' मीटिंग एवं ११ मार्च २०२१ को आयोजित 'बोर्ड ऑफ ट्रस्टीज' मीटिंग में यह निर्णय लिया गया है कि द डिवाइन लाइफ सोसायटी के लिए भेजे जाने वाले डोनेशन दिनांक १ अप्रैल २०२१ से केवल निम्नलिखित अकाउण्टस हेड्स हेतु ही स्वीकार किये जायेंगे—

जनरल डोनेशन

(१) आश्रम जनरल डोनेशन

(२) अन्नक्षेत्र

(३) मेडिकल रिलीफ

कॉरपस डोनेशन

शिवानन्द आश्रम कॉरपस (मूलधन) फण्ड

अत: भक्तवृन्द से अनुरोध है कि वे केवल उपर्युक्त अकाउण्टस हेड्स हेतु ही डोनेशन भेजें।

आश्रम के भक्त एवं हितैषी जनों को यह भी सूचित किया जाता है कि

- 'आश्रम जनरल डोनेशन' में प्राप्त धनराशि का उपयोग द डिवाइन लाइफ सोसायटी की समस्त धार्मिक, आध्यात्मिक एवं सेवा-सम्बन्धी गतिविधियों हेतु किया जायेगा यथा शिवानन्द होम द्वारा गृहविहीन-निराश्रितों की देखभाल, लेप्रसी रिलीफ वर्क द्वारा कुष्ठरोगियों की सेवा, निर्धन छात्रों को शैक्षिक सहायता, योग-वेदान्त फॉरेस्ट अकादमी का संचालन, नि:शुल्क वितरणार्थ आध्यात्मिक पुस्तकों का मुद्रण, आध्यात्मिक ज्ञान का प्रचार-प्रसार, आश्रम-मन्दिरों में पूजा-अर्चना, आश्रम एवं गौशाला का रख-रखाव तथा आश्रम की नियमित धार्मिक-आध्यात्मिक गतिविधियों का संचालन। इस धनराशि का उपयोग सोसायटी द्वारा समय-समय पर आयोजित अन्य विभिन्न धार्मिक, आध्यात्मिक एवं सेवा-सम्बन्धी कार्यक्रमों हेतु भी किया जायेगा।
- 'मेडिकल रिलीफ' के अन्तर्गत प्राप्त डोनेशन का उपयोग शिवानन्द चैरिटेबल हॉस्पिटल में जरूरतमन्द रोगियों के उपचार हेतु तथा सोसायटी द्वारा संचालित अन्य चिकित्सा-सम्बन्धी कार्यक्रमों हेतु किया जायेगा।
- इसी प्रकार 'शिवानन्द आश्रम कॉरपस (मूलधन) फण्ड' से प्राप्त ब्याज की राशि का सदुपयोग सोसायटी की समस्त गतिविधियों (धार्मिक, आध्यात्मिक एवं सेवा-सम्बन्धी) हेतु किया जायेगा।
- इस सम्बन्ध में यह तथ्य ध्यान देने योग्य है कि सोसायटी अपनी किसी गतिविधि को समाप्त नहीं कर रही है। सोसायटी की सभी आश्रम-सम्बन्धी एवं सेवा-सम्बन्धी गतिविधियाँ पूर्ववत् चलती रहेंगी; यद्यपि डोनेशन स्वीकार करने हेतु अकाउण्टस हेड्स की संख्या कम कर दी गयी है।
- द डिवाइन लाइफ सोसायटी के लिए डोनेशन 'ऑनलाइन डोनेशन सुविधा' द्वारा वेब एड्रेस

https://donations.sivanandaonline.org के माध्यम से अथवा हमारी वेबसाइट www.sivanandaonline.org में दिये गये 'ऑनलाइन डोनेशन' लिंक के माध्यम से भेजा जा सकता है।

- डोनेशन ऋषिकेश में देय बैंकड्राफ्ट अथवा चेक अथवा इलेक्ट्रानिक मनीआर्डर (E.M.O.) द्वारा "The Divine Life Society", Shivanandanagar, Uttarakhand के नाम भी भेजा जा सकता है। कृपया ड्राफ्ट अथवा चेक अथवा ई. एम. ओ. के साथ एक पत्र में डोनेशन का उद्देश्य, अपना डाक पता, फोन नम्बर, ई मेल आई डी तथा पैन नम्बर लिख कर भेजें।
- भक्तवृन्द को यह भी सूचित किया जाता है कि आश्रम-मन्दिरों में पूजा-अर्चना करवाने हेतु कोई धनराशि नहीं ली जायेगी। जो व्यक्ति अपने अथवा अपने परिवार के किसी सदस्य के नाम पर पूजा करवाना चाहते हैं, वे इस सम्बन्ध में आश्रम के महासचिव अथवा परमाध्यक्ष को आवश्यक विवरण के साथ एक अनुरोध-पत्र ई मेल अथवा डाक द्वारा भेज सकते हैं जिससे कि उनके नाम पर पूजा सम्पन्न हो सके।
- सोसायटी को भेजे जाने वाले सदस्यता शुल्क, प्रवेश शुल्क, आजीवन सदस्यता शुल्क, पैट्रनशिप शुल्क, शाखा-सम्बद्धता शुल्क एवं एस पी एल को भेजी जाने वाली अग्रिम धनराशि से सम्बन्धित प्रावधानों एवं निर्देशों में कोई परिवर्तन नहीं किया गया है।

द डिवाइन लाइफ सोसायटी मुख्यालय के सदस्यता-शुल्क एवं शाखाओं के सम्बद्धता-शुल्क की दरें

१.	नवीन सदस्यता-शुल्क*		₹ १५०/-
	प्रवेश-शुल्क	₹ ५०/-	
	सदस्यता-शुल्क	₹ १००/-	
२.	सदस्यता नवीकरण-शुल्क (वार्षिक)		₹ १००/-
३.	नयी शाखा खोलने का शुल्क**		₹ १०००/-
	प्रवेश-शुल्क	₹ ५००/-	
	सम्बद्धता-शुल्क	₹ ५००/-	
४.	शाखा-सम्बद्धता नवीकरण शुल्क (वार्षिक)		₹ ५००/-

* सदस्यता के इच्छुक प्रार्थी कृपया प्रार्थना-पत्र के साथ अपना फोटो पहचान-पत्र (Photo Identity) तथा निवास-स्थान के प्रमाण-स्वरूप कोई दस्तावेज (Residential Proof) भेजें।

**नयी शाखा खोलने के लिए मुख्यालय से लिखित अनुमति लेनी होगी।

⇨ कृपया सदस्यता-शुल्क और शाखा-सम्बद्धता-शुल्क ऋषिकेश में स्थित किसी भी बैंक के नाम बने डिमांड ड्राफ्ट अथवा चेक द्वारा भेजें।

डी एल एस शाखाओं के प्रतिवेदन

भारतीय शाखाएँ

चाँदपुर (ओडिशा): शाखा द्वारा दैनिक पूजा, साप्ताहिक सत्संग शनिवार को, गुरु पादुका पूजा गुरुवार को, सुन्दरकाण्ड पारायण संक्रान्ति दिनों को और चल सत्संग ८ और २४ को किये जाते रहे। २४ और २६ जनवरी को भक्तों के आवास पर विशेष सत्संग आयोजित किये गये।

छत्रपुर (ओडिशा): शाखा के नियमित कार्यक्रम, यथा दैनिक पूजा, प्रत्येक गुरुवार को नियमित सत्संग, तथा मासिक जयन्ती दिवस ८ एवं २४ को पादुका पूजा और अर्चना इत्यादि किये जाते रहे। १४ से २६ दिसम्बर तक गीता पारायण सहित गीता जयन्ती मनायी गयी। ६, २१ और २३ को विशेष सत्संग आयोजित किये गये। २५ को सुन्दरकाण्ड पारायण किया गया।

नन्दिनीनगर (छत्तीसगढ़): शाखा द्वारा दैनिक प्रातःकालीन प्रार्थना गीता पाठ सहित, सोमवारों को शिव अभिषेक, हनुमान चालीसा और विष्णुसहस्रनाम पारायण, गुरुवारों को साप्ताहिक सत्संग तथा शनिवारों को हनुमान चालीसा और सुन्दरकाण्ड पारायण सहित मातृ सत्संग किये जाते रहे। ३ जनवरी को महामन्त्र कीर्तन किया गया।

नयागढ़ (ओडिशा): बुधवारों को शाखा के साप्ताहिक सत्संग चलते रहे। १ जनवरी को विशेष सत्संग सहित नया वर्ष मनाया गया। १४ को मकर संक्रान्ति पर हनुमान चालीसा, सुन्दरकाण्ड, गीता पाठ और पादुका पूजा का आयोजन किया गया।

पोलसरा (ओडिशा): शाखा द्वारा श्रीमद्भागवत महापुराण पाठ सहित दैनिक सत्संग, प्रत्येक ८ और २४ को पादुका पूजा, संक्रान्ति दिवस पर सुन्दरकाण्ड पारायण इत्यादि के कार्यक्रम चलते रहे। १४ दिसम्बर को गीता पाठ सहित गीता जयन्ती मनायी गयी।

बरगढ़ (ओडिशा): शाखा द्वारा जनवरी मास में दैनिक पूजा और योग कक्षाएँ, सोमवारों को रुद्राभिषेक, गुरुवारों को गुरु पादुका पूजा, शनिवारों को साप्ताहिक सत्संग चलते रहे।

बीकानेर (राजस्थान): शाखा की नियमित गतिविधियाँ यथा शाखा में प्रतिदिन योगासन कक्षाएँ, शनिवारों को हनुमान चालीसा और सुन्दरकाण्ड पारायण, एकादशियों और अमावास्या को हवन इत्यादि गतिविधियाँ पूर्ववत् चलती रहीं, शाखा द्वारा जरूरतमन्द निर्धनों को अन्न और वस्त्र भी वितरित किये गये।

भीमकाण्ड (ओडिशा): शाखा द्वारा दैनिक पादुका पूजा और रविवारों को साप्ताहिक सत्संग किये जाते रहे।

राउरकेला (ओडिशा): शाखा द्वारा जनवरी मास में पादुका पूजा, भजन-कीर्तन, अर्चना और विष्णुसहस्रनाम सहित गुरुवारों और रविवारों को सत्संग इत्यादि के कार्यक्रम चलते रहे। निःशुल्क ऐक्यूप्रेशर और जरूरतमन्द लोगों का औषधियों सहित उपचार भी किया जाता रहा।

लखनऊ (उत्तर प्रदेश): शाखा द्वारा २ और १६ जनवरी को लेखराज होम में प्रार्थना, भजन, मन्त्र जप और स्वाध्याय इत्यादि सहित सत्संग किये गये। इसके अतिरिक्त कोविड महामारी के रोगियों के शीघ्र स्वास्थ्य-लाभ और विश्व-शान्ति हेतु महामृत्युञ्जय मन्त्र जप नियमित रूप से चलता रहा।

साउथ बलाण्डा (ओडिशा): शाखा द्वारा दैनिक पूजा, प्रत्येक शुक्रवार को साप्ताहिक सत्संग, ८ एवं २४ को पादुका पूजा आदि की नियमित गतिविधियाँ चलती रहीं। गीता पाठ, विष्णुसहस्रनाम पाठ और हनुमान चालीसा पाठ एकादशियों को किया जाता रहा। ३ जनवरी को महामन्त्र संकीर्तन और १४ को संक्रान्ति दिवस पर विशेष सत्संग आयोजित किया गया।

हिन्दी में उपलब्ध पुस्तकों की नवीनतम सूची

श्री स्वामी शिवानन्द जी महाराज कृत

अच्छी नींद कैसे सोयें . . . . . ₹ ७०/-
अध्यात्मविद्या १४०/-
कर्म और रोग २५/-
कर्मयोग-साधना. १३०/-
गीता-प्रबोधिनी ५५/-
गुरु-तत्त्व ५५/-
घरेलू चिकित्सा १९०/-
जपयोग १२०/-
जीवन में सफलता के रहस्य १८५/-
ज्योति, शक्ति और प्रज्ञा. ४०/-
दिव्योपदेश ३५/-
देवी माहात्म्य ११५/-
धनवान् कैसे बनें ५०/-
धारणा और ध्यान २१०/-
ध्यानयोग १३०/-
प्राणायाम-साधना. ७५/-
बालकों के लिए दिव्य जीवन सन्देश. . . .१००/-
ब्रह्मचर्य-साधना. ११०/-
भगवान् शिव और उनकी आराधना. . . १५०/-
भगवान् श्रीकृष्ण. १३०/-
मन : रहस्य और निग्रह २०५/-
मरणोत्तर जीवन और पुनर्जन्म. १३५/-
मानसिक शक्ति. १३०/-
मूर्तिपूजा का दर्शन और महत्त्व. ३०/-
मैं इसका उत्तर दूँ? १३०/-
श्रीमद्भगवद्गीता ४२५/-
योगाभ्यास का मूलाधार १८५/-
योगवासिष्ठ की कथाएँ ९०/-
योगासन. ११५/-
विद्यार्थी-जीवन में सफलता. ६०/-
शिवानन्द-आत्मकथा . . . . . ₹ १२०/-
सत्संग भजन माला १६०/-
सत्संग और स्वाध्याय ६०/-
सद्गुणों का अर्जन एवं दुर्गुणों का
नाश किस प्रकार करें १९५/-
सन्त-चरित्र २३५/-
सौ वर्ष कैसे जियें ९५/-
साधना ३२०/-
स्वरयोग. ८०/-
हठयोग १००/-
हिन्दूतत्त्व-विवेचन १६०/-

श्री स्वामी चिदानन्द जी महाराज कृत

अध्यात्म-प्रसून ३५/-
आलोक-पुंज १०५/-
ज्योति-पथ की ओर १०५/-
त्याग : शरणागति. २५/-
भगवान् का मातृरूप ७०/-
मोक्ष सम्भव है! २५/-
योग-सन्दर्शिका ५५/-
शाश्वत सन्देश ५५/-
शोकातीत पथ १४०/-
साधना सार. ३५/-

अन्य लेखक कृत

एकादशोपनिषदः (मूल मन्त्राः) १४०/-
गुरुदेव कुटीर में भजन-कीर्तन ५०/-
*चिदानन्दम् २००/-
जीवन-स्रोत १५०/-
शारीरकमीमांसादर्शनम् १५/-
शिव स्तोत्र माला ३५/-
श्रीमद्भगवद्गीता (मूलमात्रम्). १००/-
*सर्वस्नेही हृदय १००/-
दिव्य योगा ९०/-

५०% अग्रिम। पैकिंग अतिरिक्त । विस्तृत जानकारी के लिए निम्नांकित पते पर सम्पर्क करें :

द डिवाइन लाइफ सोसायटी, पत्रालय : शिवानन्दनगर—२४९१९२, जिला : टिहरी-गढ़वाल, उत्तराखण्ड, भारत

फोन : ०१३५-२४३४७८०, २४३००४०; E-mail : bookstore@sivanandaonline.org

For online orders and Catalogue : dlsbooks.org

NEW EDITION

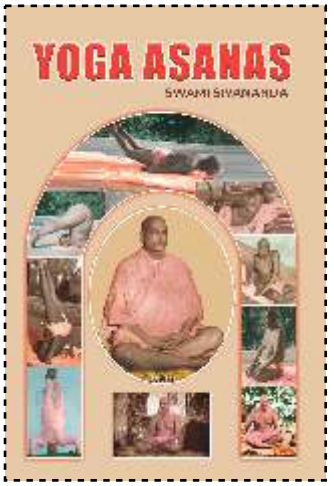

YOGA ASANAS

Pages: 192 **Price: ₹ 160/-**

Twenty Second Edition: 2022

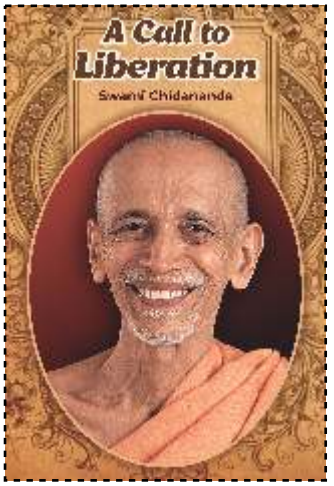

A CALL TO LIBERATION

Pages: 512 **Price: ₹ 390/-**

Third Edition: 2022

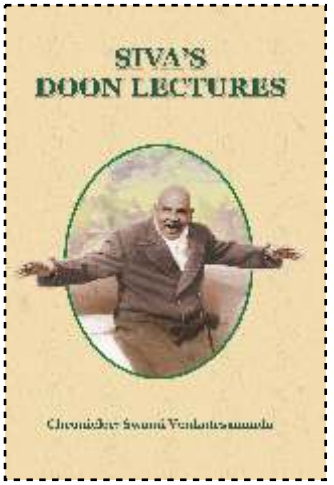

SIVA'S DOON LECTURES

Pages: 272 **Price: ₹ 170/-**

Second Edition: 2022

Statement about ownership and other particulars about newspaper "Divya Jeevan"

FORM IV

1. Place of publication:	Yoga Vedanta Forest Academy Press, Shivanandanagar, Uttarakhand
2. Periodicity of its publication:	Monthly
3. Printer's Name: Nationality: Address:	Swami Advaitananda Indian The Divine Life Society, P.O. Shivanandanagar-249 192, Dt. Tehri Garhwal, Uttarakhand, India
4. Publisher's Name: Nationality: Address:	Swami Advaitananda Indian The Divine Life Society, P.O. Shivanandanagar-249 192, Dt. Tehri Garhwal, Uttarakhand, India
5. Editor's Name: Nationality: Address:	Swami Nirliptananda Indian The Divine Life Society, P.O. Shivanandanagar-249 192, Dt. Tehri Garhwal, Uttarakhand, India
6. Names and addresses of individuals who own the newspaper and partners or shareholders holding more than one per cent of the total capital:	The Divine Life Trust Society, P.O. Shivanandanagar-249 192, Dt. Tehri Garhwal, Uttarakhand, India

I, Swami Advaitananda, hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

Swami Advaitananda
Publisher

Date: 1st March 2022

Registrar of Newspapers for India
No. 71610/1999

Postal-Registration No. TRI/005/2021-23

LICENSED TO POST WITHOUT PREPAYMENT
(Licence No. WPP No. 02/21-23, Valid upto: 31-12-2023)
DATE OF PUBLICATION: 20th OF EVERY MONTH
DATE OF POSTING: 20th OF EVERY MONTH
Posted at Shivanandanagar, Tehri-Garhwal, Uttarakhand

मार्च २०२२

ईश्वर का सगुण और निर्गुण रूप

श्री कृष्ण देखने वालों के अपने-अपने दृष्टिकोण और सूझ के अनुसार ऋषि-मुनियों को परब्रह्म और योगियों को परम तत्त्व के रूप में दिखायी पड़े, गोपियों की दृष्टि में वे परम सौन्दर्य-स्वरूप, तो योद्धाओं की दृष्टि में महान् योद्धा थे, वसुदेव और देवकी के लिए शिशु तो कंस के लिए यम-स्वरूप थे, इसी प्रकार राजाओं की दृष्टि में वे सम्राट् दीखे। एक ही पदार्थ, देखने वाले के भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणों के अनुसार भिन्न-भिन्न रूपों में दीखता है।

पाश्चात्य दार्शनिक जिसे 'परमात्मा' (Oversoul) कहते हैं, वह वही है जिसे उपनिषदों ने ब्रह्म कहा है या वेदान्ती जिसे आत्मा कहते हैं। सभी जीवात्माओं का आधारभूत परम तत्त्व ही वह 'परमात्मा'(Oversoul) है। वह यही है जिसे स्पिनोज़ा 'सारतत्त्व' (Substance) कहता है या कैण्ट जिसे 'पदार्थ' (Thing in itself) कहता है। वेदान्त का सार शनैः-शनैः पाश्चात्य दार्शनिकों के मस्तिष्क में उतरने लगा है और वे भी मानने लगे हैं कि शरीर एवं चित्त से भिन्न एक अमर आत्मा का, एक परम तत्त्व का अस्तित्व है।

श्री रामानुजाचार्य के सिद्धान्तानुसार एक सविशेष ब्रह्म है जो सारा कार्य करता है। वह बड़ा करुणामय है। वह पुण्यात्माओं को पुरस्कृत करता है। परन्तु श्री शंकराचार्य के अनुसार ब्रह्म निर्विशेष है। वह पूर्णतया उदासीन है। यह उदासीनता की स्थिति बहुत उच्चतम स्थिति है।

स्वामी शिवानन्द

सेवा में

'द डिवाइन लाइफ ट्रस्ट सोसायटी' की ओर से स्वामी अद्वैतानन्द द्वारा 'योग-वेदान्त फारेस्ट एकाडेमी प्रेस, पो. शिवानन्दनगर, जि. टिहरी-गढ़वाल, उत्तराखण्ड, पिन २४९१९२' से मुद्रित तथा 'द डिवाइन लाइफ सोसायटी मुख्य कार्यालय, पो. शिवानन्दनगर, जि. टिहरी-गढ़वाल, उत्तराखण्ड, पिन २४९१९२' से प्रकाशित। फोन : ०१३५-२४३००४०, २४३११९०
E-mail: generalsecretary@sivanandaonline.org ; Website : www.sivanandaonline.org ; www.dlshq.org
सम्पादक : स्वामी निर्लिप्तानन्द